# अध्याय - पंचम

## अब्दुल बिस्मिल्लाह के कथा-साहित्य का कलपक्षीय वैशिष्ट्य

जिस प्रकार से एक ही सिक्के के दो अनिवार्य पहलू होते है या फिर यो कहले कि जैसे इस भौतिक जगत में वर्तमान प्रत्येक सचराचर के पक्ष-सकारात्मक या नकारात्मक, अच्छाई-बुराई, गुण-दोष आदि अनिवार्य रूप से होते हैं और दोनों पक्षो के सम्मिलन से ही चर और अचर अपना सम्पूर्ण स्वरूप प्राप्त करते हैं, ठीक उसी प्रकार से प्रत्येक साहित्यिक सर्जना के भी दो अपरिहार्य घटक होते हैं और इन दोनों घटकों के सम्मिलन से ही कोई रचना अपनी अंतिम प्रकृति को प्राप्त करती है। साहित्य-रचना के इस आधारिक पक्षो या घटकों में पहले पक्ष को भवपक्ष तथा दूसरे पक्ष को कलापक्ष कहा जाता है। ध्यातव्य है कि सकरात्मक, नकारात्मक, गुण-दोष, अच्छाई-बुराई आदि प्रत्येक साहित्य-सर्जना में भी घुले-मिले होते हैं लेकिन उनका विलयन रचना की प्रवृत्ति के रूप में होता है न कि उसके भाग या पक्ष स्वरूप में। इसे सरल शब्दों में कहें तो कह सकते हैं कि जैसे किसी मनुष्य की सत्ता उसके शरीर एवं आत्मा के सम्मिलन से ही सुनिश्चित होती है वैसे भावपक्ष और कलापक्ष मिलकर किसी साहिसिक सर्जना की अस्मिता को सुनिश्चित करते हैं। जिस तरह से आत्मा और शरीर में परस्पर अन्योन्याश्रित संबंध होता है, अर्थात् आत्मा की अनुपस्थिति में निर्जीव शरीर को कोई अस्तित्व नहीं होता, वह महत्वहीन या निरर्थक हो जाती है तथा आत्मा के लिए शरीर पिजडे का कार्य करती है। यदि शरीर ही न रहे तो आत्मा अपने स्वतंत्र स्वरूप में अस्तित्वविहीन और निरर्थक हो जाती है। ठीक इसी तरह से किसी रचना के भावपक्ष और कलापक्ष भी परस्पर अन्योन्याश्रित संबंध रखते हैं तथा एक के अभाव में दूसरा स्वतः ही कल्पनातीत एवं निरर्थक बन जाता है।

काव्यशास्त्रियों और साहित्य मीमांसको ने भावपक्ष को रचना की आत्मा और कलापक्ष को शरीर माना है। आत्मा तथा शरीर के संदर्भ में एक की अनुपस्थिति में जो स्थिति दूसरे

की होती है, वही दशा भावपक्ष एवं कलापक्ष के संदर्भ में एक-दूसरे की निवर्तमानता में होती है। किसी भी साहित्य सर्जना में विषय या कथ्य के रूप में भाव, विचार व घटना वृत्तांत आदि अनिवार्य रूप से सन्निहित होते हैं, जो कि भाव पक्ष के अंतर्गत आते है। इसी तरह भाव पक्ष में अंतर्भुक्त भावों, विचारों, घटनाओं व क्रियाकलापों आदि की अभिव्यक्ति के लिए भाषा, शैली, अलंकार, लोकोक्तियों, मुहावरों, स्थानीय शब्दराशियों आदि का सहारा लिया जाता है, जो कि कलापक्ष के महत्वपूर्ण घटक होते हैं। ऐसे में यदि किसी साहित्यकार के पास कथ्य के तौर पर अभिव्यक्त करने के लिए पर्याप्त भाव, विचार संग्रहित हों, लेकिन इनकी अभिव्यक्ति के लिए उसके पास यथेष्ट शब्दकोश, भाषिक ज्ञान, व्याकरणिक तथा काव्य शास्त्रीय ज्ञान न हो तो वह अपनी रचना को मूर्त स्वरूप कैसे प्रदान कर पाएगा। इसी तरह से यदि संबंधित रचनाकार को काव्यशास्त्र, भाषा विज्ञान, छंदशास्त्र आदि का विशद ज्ञान हो तथा उसके पास अगाध शब्द राशिया भी उपलब्ध हो, लेकिन उसके पास कथ्य के लिए भाव, विचार या घटना वृत्तांत ही वर्तमान न हो तो वह अपने अगाध काव्य शास्तीय, छन्दशास्त्रीय भाषा विज्ञानी एवं शब्द कोशीय ज्ञान का प्रयोग कहाँ करेगा। अभिकथन का तात्पर्य यह है कि साहित्य रचना के लिए भावपक्ष और कलापक्ष की सम्मिलित वर्तमानता अपरिहार्य होती है। दोनों में से यदि एक भी अनुपस्थित रहा तो आत्मा एवं शरीर के संबंधो की तरह दोनों अस्तित्वविहीन एवं निरर्थक हो जायेंगे। वस्तुतः भावपक्ष और कलापक्ष दोनों का बुनियादी अस्तित्व एक दूसरे पर ही आश्रित होता है।

'आत्मा' किन तत्वों या घटकों से मिलकर बनी होती है यह दार्शनिकों और तत्व-मीमांसकों की विवेचना एवं अनुसंधान का विषय है, जबकि साहित्य-सर्जना के भावपक्ष में कौन-कौन से घटक सम्मिलित होते हैं इसका विवेचन-विश्लेषण और निर्धारण साहित्य मीमांसा, समालोचना तथा काव्यशास्त्र के अंतर्गत किया जाता रहा है। मीमांसकों, आलोचको तथा काव्यशास्त्रियों ने किसी रचना की आत्मा या कथ्य में प्रयुक्त भाव, विचार, घटना-वृत्तांत, देशकाल, वातावरण, पात्र एवं उनके चरित्र-चिंत्रण, संवाद, कार्य-व्यापार, वस्तु

तथा समस्त वैचारिक, व्यावहारिक एवं मानसिक आयामों आदि घटकों को रचना के भावपक्ष में सम्मिलित किया है। इसी तरह जैसे पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और अग्नि नामक पाँच तत्वों के सम्मिलन से किसी भौतिक शरीर की रचना होती है, ठीक उसी तरह से भाषा, शैली, अलंकार, छन्द, लय, ताल तथा गेयता, शब्द, पद, वाक्य, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, सूक्तियाँ आदि साहित्य-सर्जना की शरीर अर्थात् कलापक्ष में अंतर्भुक्त विविध अवयव या घटक होते है। इन घटकों में से अलंकार, छन्द, लय, ताल और गेयता आदि केवल काव्य रचनाओं के शारीरिक घटक होते हैं, जबकि गद्य रचना के कलापक्ष में भाषा, शैली, शब्द, पद, लोकोक्ति, मुहावरे, कहावतें, सूक्तियों आदि अवयव ही सम्मिलित होते हैं।

रचनाकार के लिए अपनी रचना में भावपक्ष और कलापक्ष के मध्य यथेष्ट सामंजस्य बनाए रखना अपरिहार्य होता है। यदि वह रचना के किसी एक पक्ष पर अधिक और दूसरे पर कम ध्यान देगा तो उसकी सर्जना ठीक उसी तरह से असंतुलित हो जाएगी जिस तरह से शरीर के किसी एक अंग के अधिक अथवा न्यून विकास से शरीर दिव्यांग हो जाता है। एक स्वस्थ्य, उत्कृष्ट एवं आदर्श शारीरिक संरचना निर्मित होने के लिए जैसे उसके प्रत्येक अंग का संतुलित, समय सापेक्ष एवं नैसर्गिक विकास का होना अपरिहार्य होता है वैसे ही एक अत्योत्तम कोटि की आदर्श सर्जना के लिए समालोचकीय प्रतिमानों के सापेक्ष उसके आत्मा एवं शरीर संबंधी संभी घटको का संतुलित विकास भी आवश्यक होता है। जो रचना साहित्य-समालोचना के इन मानदण्ड की अवहेलना करती है वह असंतुलित, ओछी एवं देशकाल की परिधि में ही सीमित रह जाती है। विगत दो अध्यायो के अंतर्गत हम नवोन्मेषशालिनी प्रज्ञा एवं विशिष्ट रचनाधर्मिता के संपोषक समकालीन साहित्यकार बिस्मिल्लाह जी के साहित्य के भाव पक्ष का विशद विवेचन-विश्लेषण करते हुए उसकी अनन्यता का दिग्दर्शन कर चुके हैं इसलिए विवेच्य अध्याय में हम उनके कलापक्ष का अन्वीक्षण-परीक्षण करते हुए यह देखेंगे कि क्या वे भावपक्ष की भाँति ही अपनी सर्जनाओं के

कलापक्ष की भी विशिष्टता और उत्तमता बनाए रखने में सफल रहे हैं अथवा क्या वे अपनी रचनाओं में भावपक्ष और कलापक्ष के मध्य यथेष्ट सामंजस्य बनाए रखने में सफल रहे हैं?

## 5.1 भाषाई सौंदर्य

संसार का प्रत्येक मनुष्य भिन्न-भिन्न परिस्थितियों और बाहरी घटनाओं की प्रभावोत्पादकता से अपने अंतकरण को समय-समय पर उत्पन्न होने वाले विभिन्न भावानुभावों की उत्पत्ति द्वारा समृद्ध करता रहता है। विभिन्न उद्देश्यो के अनुरूप अवसर आने पर वह इन्हें कायिक, वाचिक, आहार्य एवं सात्विक वृत्तियों के माध्यम से दूसरे प्राणिधारियों के समक्ष प्रकट भी करता है। भावाभिव्यक्तियो के प्रकटीकरण की दूसरी वृत्तियाँ तो कमोवेश में दूसरे जीवों में भी पाई जाती है लेकिन वाचिक वृत्ति दैवयोग से केवल मनुष्य में ही पाई जाती है जिसे मानव जाति प्रकृति द्वारा प्रदत्त भाषात्मक अनुदान मानकर उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करती है। क्योंकि संसार के प्रत्येक समाज अथवा राष्ट्र की मनो जगत निर्मित करनेवाली प्रवृत्तियाँ और परिस्थितियाँ उसके भौगोलिक तथा सामाजिक कारकों पर निर्भर करती हैं इसलिए प्रत्येक समाज और राष्ट्र के भावानुभावों प्रकटीकरण में विविधता दिखाई देती है, जिस सामान्य तौर पर संसार में भाषाई विविधता के नाम से भी जाना जाता है।

भाषाई उद्भव के समाज या व्यक्ति विशेष के मनोव्यापारों से संदर्भित होने का अभिप्राय यह नहीं है कि जितनी संख्या मानव-जाति और समाज की होगी, उतनी ही संख्या भाषा की भी होगी या फिर प्रत्येक व्यक्ति और समाज की अपनी-अपनी स्वतंत्र भाषाएँ होंगी। दरअसल संसार का प्रत्येक मनुष्य किन्हीं-न-किन्ही समुदायों, सामाजिक संगठनों समूहों, परम्पराओं, प्रथाओं एवं रीति-रिवाजों आदि से अनिवार्यत: अंतर्संबंधित रहता है जिनकी वाचन,शैची, वान्यार्थ, शब्दार्थ और वाचिक संकेतन आदि में समरूपता हो कुंवारण वह एक जाटिया समुदाय विशेष की भाषाई परम्परा से सम्बर्त हो जाता है। इससे स्वतःसिद्ध

है कि भाषा एक व्यापक एवं विशेष वर्ग- संगठन के भावों की अभिव्यक्तिपरक अनुवादक व संरक्षक होती है। वस्तुतः जैसे कोई राष्ट्र प्रांतीय जनपदीप एवं ग्रामीण इकाइयों के सम्मिल्लन में संप्रभुता एवं अखण्डता का अधिकारी बनता है, वैसे ही किसी समाज का अस्तित्व अनेक जातियों-उपजातियों, वर्गो-उपवर्गो, संगठन तथा संस्थाओं आदि के एकीकरण पर आश्रित होता है। मनुष्य की सामाजिकता एक प्राकृतिक यथार्थ होती है जबकि समाज की अपनी संरचना अत्यधिक जटिल होती है। यह अनेक वर्गों, जातियों, भौगोलिक क्षेत्रो आदि में विभक्त होता है तथा प्रत्येक की अपनी-अपनी अभिव्यक्ति शैली, वाचनार्थ ध्वन्यात्मकता, शब्दकोश एवं अल्पाधिक भिन्नतावाली व्याकरणिक संरचना वाली भाषाई विशेषताएँ होती है। ये क्षेत्रीय अथवा उपवर्गीय भाषाई भिन्नताएँ बहुत कम होती है। जबकि इनमें समरूपता कहीं अधिक होती हैं और इन्ही भिन्नताओं को किसी मानक भाषा की बुनियाद अथवा पारिभाषिक प्रकृति में उपभाषा या बोली के नाम से अभिहित किया जाता है।

संस्कृत की 'भाष्' धातु से निर्मित भाषा मनुष्य के विचारों, भावो, अनुभावों एवं मनोविकारों-मनोवृत्तियों आदि के अभिव्यक्ति का सर्वाधिक सशक्त माध्यम होती है। संस्कृत में "भाष्' धातु का अर्थ होता है- बोलना या कहना, अर्थात् ध्वनियों, शब्दों या पदों के माध्यम में मनुष्य द्वारा बोले एवं कहे जाने को 'भाषा' के नाम से अभिहित किया जाता है। प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी डॉलर गणपति चन्द्रगुप्त के अनुसार- "भाषा व्यक्त करने या कहने अथवा प्रकाशित होने का माध्यम अर्थात् विचार व्यक्त करना या मनोभावों का प्रकाशित होना, ये जिस साधन से सम्पादित होते हैं- उसे भाषा कहा जाता है।"1

मनुष्य जीवन में सामान्य भावाभिव्यक्ति का सबसे उत्तम माध्यम भाषा ही होती है जो कि अपने समाज और देशकाल एवं वातावरण की प्रतिनिधि होने के साथ-साथ अपना युग सत्य भी होती है। वैसे तो भावों, अनुभावो, विचारों आदि की अभिव्यक्ति के लिए दैनंदनीय

मनुष्यों को भी एक संस्कारित भाषा की आवश्यकता होती है लेकिन व्यापक लोक कल्याण एवं स्वानभूतियों की साहित्यिक अभिव्यक्ति का उद्देश्य रखने वाले साहित्य-सर्जकों के लिए संस्कारित भाषा के अतिरिक्त व्याकरण सम्मत, काव्यशास्त्रीय एवं भाषा वैज्ञानिक सिद्धांतों की संगति में बैठने वाली भाषा की आवश्यकता होती है। साधारण मनुष्य सामान्य वार्तालाप करते समय अथवा अपने भावों, विचारों को व्यक्त करते समय भाषा व्याकरणिक नियमों और भाषा-वैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुपालन के प्रति शिथिल होता है जबकि रचनाकार के लिए ऐसा करना संभव नहीं होता है।

लोकमंगल तथा आत्माभिव्यक्ति को अभिव्यापक उद्देश्य लेकर चलने वाले साहित्यकार की भाषा का व्याकरणिक विषयों एवं भाषा वैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुरूप होना अपरिहार्य होता है। रचनाकार अपनी सर्जनाओं में सदैव परिनिष्ठित अथवा मानकीकृत भाषा का ही प्रयोग करता है जो कि शिक्षित जनसमुदाय की प्रमुख भाषिक प्रवृत्ति होती है और इसी जनसमुदाय के लिए ही वह साहित्य की रचना करता है। इसलिए कालजयी प्रकृति की व्यापक लोकमंगलकारी रचनाओं के लिए रचनाकार में भाषा के प्रति अत्यधिक ज्ञान एवं सजगता अपेक्षित होती है। वह अपनी भाषा का जितना अधिक व्याकरणिक, भाषा वैज्ञानिक, काव्यशास्त्री, शब्दकोशीय एवं साहित्यिक ज्ञान रखेगा उसकी सर्जनाएं उतनी ही अधिक चिरकालिक और सार्वभौम प्रकृति की होगी तथा उनमें उतना ही अधिक साहित्य और समाज का कल्याण भी होगा। इसके अतिरिक्त भाषाई समृद्धि प्राप्त करने के लिए रचनाकार को अपने भौगोलिक परिक्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक धार्मिक सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक परिस्थितियो, प्रवृत्तियों, जन-चित्तवृत्तियो तथा स्थानीय बोली शब्दावलियो आदि का ज्ञान होना भी अपरिहार्य होता है। रचनाकार की भाषिक सामर्थ्य या योग्यता उसके द्वारा अभिधा, लक्षणा व व्यंजना शब्द शक्तियों से युक्त अभीष्ट शब्दों के प्रयोग से आकलित की जा सकती है। यथेष्ट व उपयुक्त शब्दों के चयन रचनाकार के भाव, विचार तथा संवेदना आदि में चार-चांद लग जाते है। इसमें भी स्थानीय या बोलचाल की भाषा अर्थात् बोलियों के

शब्दों का प्रयोग रचना और रचनाकार के लिए विशेष महत्व रखती है, क्योंकि इनसे ही मानवीय परिनिष्ठित भाषा अपनी शक्ति और समृद्धि प्राप्त करती है। डॉ° रामस्वरूप चतुर्वेदी के शब्दों में- "बोलचाल की भाषा निरन्तर के जीवित उपयोग से विकसित होती है। इस दृष्टि से किसी भी देश की साहित्यिक भाषाएँ वहाँ के जनसमुदाय की भाषा विकास की विभिन्न मंजिलों को सूचित करती है। हम केवल इतना कह सकते हैं कि परस्पर मिलती-जुलती टोलियो के समूह में कोई बोली किन्ही विशिष्ट कारणों से राजनीतिक, सामाजिक अथवा अन्य साहित्यिक सर्जनशीलता का माध्यम कहीं जाती है। फिर कई शताब्दियों के प्रयोग के बाद जब उसकी प्राणशक्ति घटने लगती है और बदलते हुए नये युग के यथार्थ से जब वह अपने-आपको संयुक्त करने में असमर्थ पाती है, तब उसके विकास की मंजिल पूरी हो जाती है।"2

भाषा व्यक्ति और समाज के बीच भावों-विचारों आदि का आदान-प्रदान करती है तथा इसी के माध्यम से कोई व्यक्ति अपने भावों, विचारों, अनुभूतियों व संवेदनाओं को समाज या दूसरे व्यक्तियों के समक्ष व्यक्त करता है तथा दूसरे के भावों, विचारों, अनुभूतियों व संवेदनाओं आदि का कर्णेन्द्रियों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करती है। भाषा का यही कार्य साहित्य भी करता है। साहित्य भी भावो विचारों का अनुवादक होता है जिसके माध्यम से रचनाकार के व्यक्तिगत जीवनानुभव, भोगे हुए यथार्थ, उसके समय की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक सांस्कृतिक एवं भौगोलिक परिस्थितियाँ, प्रवृत्तियों तथा जन चित्तवृत्तियाँ आदि समाज के वर्तमान सदस्यों अथवा आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचती हैं। साहित्य अपना यह कार्य भाषा के माध्यम से ही करता है, जो कि विचार विनिमय का सर्वोत्तम साधन होती है। दरअसल रचनाकार द्वारा अपने व्यक्तिगत जीवनानुभवों एवं सामाजिक यथार्थ अर्थात् युगसत्य की सम्मिलित रूप से भाषाई अभिव्यक्ति प्रदान करना ही साहित्य कहलाता है। अत: स्वाभाविक है कि साहित्य के लिए भाषा की विविधता, उत्तमता, भाषा वैज्ञानिकता, व्याकरणिक नियमबद्धता और काव्यशास्त्रीयता अपरिहार्य होती है। इसी सैद्धांतिकी के

अनुरूप साहित्य की भाषा में बिम्बात्मकता प्रतीकात्मकता, लाक्षणिकता, प्रवाहमयता या गतिशीलता, निरंतरता, शब्दगत विविधता, (तत्सम, तदभव, देशज व विदेशज), शब्दशक्ति संपन्नता (अभिधा, लक्षणा, व्यंजना), चित्रात्मकता स्थानीयता (लोकोक्तियों, मुहावरों, कहावतों, गालियों आदि का प्रयोग) तथा मानकता ( भाषा विज्ञान, व्याकरण और काव्यशास्त्र के नियम के अनुरूप होना) आदि भाषिक प्रवृत्तियां पापी जाती हैं। इनमें से कुछ विशेषताएँ तो, मसलन- बिम्बात्मकता, प्रतीकात्मकता आदि केवल काम की भाषा में अंतर्निहित होती है, शेष अन्य गद्य एवं पक्ष दोनों प्रकार की साहित्यिक विधाओं की भाषिक विशेषताएँ होती है।

जैसा कि विगत अध्याय तीन और चार में उपन्यास कला के तत्व एवं कहानी कला के तत्व के रूप में भाषा-शैली का विशद वर्णन-विवेचन करते हुए बताया जा चुका है कि कथा-साहित्य (कहानियों और उपन्यासों) की भाषा उपन्यास के कथानक पात्र एवं उनके चारित्रिक विकास, देशकाल और वातावरण, संवाद एवं उद्देश्य आदि औपन्यासिक कहानी परक तत्वों के सर्वथा अनुरूप होती है। इस अनुरूपता के अभाव में उपन्यास तथा कहानी हास्यास्पद या अवास्तविक बन जाएगी। उदाहरण स्वरूप यदि कोई उपन्यासकार अपनी कहानी या उपन्यास में मध्यकाल में होने वाली लड़ाइयों का वर्णन करते समय किसी मुसलमान सैनिक को धाराप्रवाह अंग्रेजी भाषा में संवाद करता हुआ दिखाई देगा तो यह बहुत ही हास्यास्पद लगेगा, क्योंकि मध्यकाल में अंग्रेजी का कोई अस्तित्व नहीं था और उस समय भारत में उर्दू, अरबी, फारसी एवं अन्य भारतीय भाषाएँ व बोलियाँ ही प्रचलन में थी। अभिकथन का तात्पर्य यह है कि कथा-साहित्य की भाषा कथा और कथाकार के देशकाल व वातावरण उसकी पात्र योजना एवं पात्रों के चारित्रिक विकास आदि के अनुरूप ही होती है। वैसे तो मुस्लिम समाज में जन्मना संबंध रखने के कारण बिस्मिल्लाह जी उर्दू भाषा का सूक्ष्मातिसूक्ष्म साहित्यिक, व्याकरणिक, शब्दकोशीय तथा भाषा वैज्ञानिक ज्ञान रखते है,

क्योंकि तूर्कों, मुगलो की परम्परा का ही विकास रहने के कारण मुस्लिम समाज की आधिकारिक भाषा उर्दू ही रही है।

उर्दू भाषा अरबी और फारसी भाषा का ही मिश्रित स्वरूप है इसलिए स्वाभाविक है कि बिस्मिल्लाह जी को उर्दू के साथ-साथ अरबी और फारसी भाषाओं का भी सम्यक ज्ञान हो। इसी तरह औपनिवेशिक शासन से लेकर से लेकर वर्तमान तक भारतीय समाज में दिन-प्रतिदिन अंग्रेजी भाषा की महत्ता बढ़ी है। पहले मैकाले की शिक्षा नीति ने और कब भूमण्डलीकरण और बाजारवाद जैसी वैश्विक अवधारणाओं ने विश्व के प्रत्येक भू-भाग में अधिवसित प्रत्येक मनुष्य के लिए अंग्रेजी भाषा का ज्ञान अनिवार्य कर दिया, इसलिए साहित्य और समाज के प्रति उत्तरदायी होने के कारण बिस्मिल्लाह जी अंग्रेजी भाषा का भी पर्याप्त ज्ञान रखते हैं। हिन्दी भाषा में साहित्य-सृजन करने के कारण वे इस भाषा के मर्मज्ञ विद्वान तो हैं ही, पूर्वी हिन्दी की एक बोली अवधी से भौगोलिक, सामाजिक और परिवारिक सम्बन्ध रखने के कारण वे इस बोली के व्याकरणिक और शब्दकोशिय ज्ञान से भी परिचित हैं। इस तरह से बिस्मिल्लाह जी उर्दू, अरबी, फारसी, अंग्रेजी और हिन्दी भाषा एवं अवधी तथा भोजपुरी बोली से घनिष्ठ संबंध रखते हैं। भोजपुरी भाषा से उनकी सम्बद्ध ही वाराणसी प्रवास के दौरान हुई। तथा इन्हीं से संबंधित शब्दों, मुहावरों, कहावतो, लोकगीतो, सुक्तियों एवं शायरी आदि का प्रयोग उन्होंने अपने कथा-साहित्य में किया है। इस तरह से बिस्मिल्लाह जी की कहानियों और उपन्यासों में कुल चार प्रकार के शब्दों का प्रयोग मिलता है जिनका संक्षिप्त परिचय अग्रलिखित प्रकार से है-

**तत्सम शब्द-** तत्सम शब्द वे शब्द होते हैं जो मूलत: संस्कृत भाषा हैं तथा जिन्हें बिना किसी अर्थगत या संरचनागत परिवर्तन के हिन्दी शब्दकोश में सम्मिलित कर लिया गया है। बिस्मिल्लाह जी की कहानियों और उपन्यासों में प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द निम्न हैं- कमल,

पुष्प, अग्नि, साक्षी, प्रधान, विद्या, संस्कृत, नक्षत्र, क्रोध, ज्वाला, धर्म, प्रथम, पुस्तक, प्रतीज्ञा, यातायात, भोजन, पाठ, परीक्षा, नारी, पुरुष, मित्र, निर्देशक एवं सेवा आदि।

**2. तद्भव शब्द-** तदभव शब्द वे शब्द होते हैं, जिनकी उत्पत्ति संस्कृत शब्दों से हुई है। हिंदी भाषा ने अपनी प्रवृत्ति और व्याकरणिक संरचना के अनुरूप बहुत से संस्कृत मूल के शब्दों को किंचित परिवर्तित संरचना के साथ अपने शब्दकोश में समाहित कर लिया है जिन्हे संस्कृत में उत्पन्न होने के कारण तद्भव शब्द कहा जाता है। बिस्मिल्लाह जी के कथा साहित्य में सर्वाधिक संख्या इन्हीं तद्भव शब्दो की है। उदाहरण के लिए उनकी कहानियों और उपन्यासों में प्रयुक्त तद्भव शब्द अग्रलिखित है- आग, दूध, पहला, गाँव, गर्मी, दुपहर, दुहरा, पूजा, मिसरी, सेठ, सजावट, महीना, आसमान, बादल, पसीना, चिट्ठी, खाना और पानी आदि।

**3. देशज शब्द-** देशज शब्द वे शब्द होते हैं जो यद्यपि संबंधित भाषा के मानक शब्दकोश में सम्मिलितन ही होते हैं लेकिन जिनका प्रयोग स्थानीय स्तर पर किया जाता है। सरल शब्दों में कहें तो जिन शब्दों की उत्पत्ति का कोई पता नहीं चलता है- उन्हें देशज शब्द कहां जाता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपने उपन्यास एवं कहानियों में मध्यप्रदेश के मंडला तथा उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद और बनारस के स्थानीय परिवेश में प्रयुक्त होने वाले असंख्य देशज शब्दों का प्रयोग किया है जिनमें से कुछ इस प्रकार से हैं- मुखारी, पर्टाला, एंज्जन, दौंगरा, धया चौकड़ी, अबेर, कटान, मसौला, गिरस, जुगादड़ी, कोहार, मुसहर, सकाडे, लेजुरी, ढ़रकी, फल्ली, खमरी, फ़ू रौ, जिमटा, मौनी, बरौठा, बैगा, सोहराया, नहीं, खरका, परदी, दोहरी, कंदरी, खियारीत, कुरमा, माँदर, पिरभिटिया, कुदई, उर्दा, खोरी, चिकारा, नेजा, बागा, फुलरा, खुजलैया, जाँता, छेरता, भेजरा, टीकना, कुटकी, पढ़ारी, खरिहानी, दुऔलिया, पैना, उडवा, ढोला, कोटवार, रेजा, बेठन, कलाबत्तू, गिरस्ता, सफा-पानी, बैठकी, मलसी, गोलगड्डा, कजनी, ठरवा, गोलघर एवं आखिरी बुध आदि।

**4. विदेशज शब्द-** बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य में विदेशज शब्दों के रूप में अंग्रेजी और उर्दू-फारसी के शब्द अधिक प्रयुक्त हुए हैं। अंग्रेजी के शब्दों में ट्रेन, ड्यूटी, कॉमन, प्रिंसिपल, लायब्रेरी, रेट, रजिस्टर, रिहर्सल, प्लेट, मेनरोड, रिजल्ट, सप्लाई, शिफ्ट, ऑफिस, ट्यूशन, स्कूल, डॉक्टर, प्रोपाईटर, मैनेजर, यूनिवर्सिटी, मेम्बर, प्रोफेसर, स्कूटर, टैफ्रिक, ट्रेनिंग मार्निंग, कलक्टर, आर्डर, एक्सप्रेस, कॉलेज, लेक्चरर, डिग्री, पैसिंजर, कॉल, कलर्क, अलार्म, एक्सप्लेशन, ड्रायवर, विदाऊट, एडपेस्ट, कट्रोल, कर्फ्यू, फ्लैट, टायपिस्ट, कंडक्टर, टे, वाटर, इलेक्शन, मिस्टर, डार्लिंग, मीटिंग स्टॉल, स्टेज तथा इम्प्रेस्ड आदि शब्दों का प्रयोग बहुलता में देखा जा सकता है जबकि उर्दू-फारसी के शब्दों में इंसाफ, मासुमियत, उम्मीद गैरमौजूदगी, शौहर, मुआयना, मजहब, नसीहत, ख्वाब, कब्र, खिदमत, दफन, इलाम, काफिला, इंसान, रहमदिल, रोज, शरीफ, मेहमान, मुसीबत, इजाद, हिदायत, हैरत, नाजुक, दिमाग, हाजिर, वक्त, सक्त, जवान, जिबह खुदा, मुनाफा, निगाह, वफा, कुर्बानी, पैजामा, शेरवानी, लुंगी, गुसल, करीब, इल्जाम, टोपी, दहेज, हलाला, तोबा-तोबा, मेहर, तलाक, तस्वीर, बहरहाल, अखबार, जन्नत, फरियाद, सब्र, अदा, अंदाज, नज़र, दामाद, प्रभा, हक, नजदीक, कस्बा, खैरियत, इल्म, मसला, इस्तेमाल, इंतजाम, शक्ल, बावजूद अफसोस, वाकई, किताब, दूल्हा-दुल्हन, जिस्म, खरीद, खरोक्त, मानदंड, दिक्कत, इजाजत, गला, दरख्त, दरअसल और खामोश आदि शब्दों का प्रयोग बहुतायत में देखा जाता है। जैसा कि पूर्व में अभिकथित हो चुका है कि बिस्मिल्लाह जी का उर्दू भाषा से जन्मना संबंध रहा है और इसी उर्दू में चलते उन्होंने अरबी और फारसी शब्दों का भी सम्पर्क ज्ञान प्राप्त किया है। लेकिन अपने कथा-साहित्य में उर्दू-फारसी के शब्दों का प्रयोग करते समय उन्होंने इन शब्दों की ख्यातिलब्धता का पर्याप्त ध्यान रखा है अर्थात् उन्होंने उर्दू-फारसी के उन्ही शब्दों का प्रयोग क्रिया है जो परम्परा से हिंदी भाषा और भारतीय समाज में प्रचलन में हैं तथा जिन्हें कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति भी बिना किसी कठिनाई के समझ सकता है।

उन्होने उर्दू-फारसी के कठिन या अप्रचलित शब्दों का प्रयोग नहीं किया है। यही कारण है कि उनके उपन्यासो में उर्दू-फारसी शब्दों की भरमार होने पर भी इन्हें पढ़ते समय सामान्य या कम पढ़े-लिखे पाठक को भी किसी तरह की भाषाई समस्या का सामाना नहीं करना पड़ता है और न ही भाव एवं विचार संप्रेषण में किसी तरह का अवरोध ही उत्पन्न होता है। यही तो एक उत्कृष्ट साहित्य-सर्जक की अनन्य सृजनशील एवं की विशेषता होती है जो अपनी रचनाओं में न देशज-विदेशज शब्दों के चयन व प्रयोग के प्रति अत्यधिक सजग रहता है। बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य में तत्सम, तद्भव, देशज व विदेशज सभी प्रकार के शब्दों का चयन प्रयोग के संदर्भ में यह सजगता अपने सर्वोत्कृष्ट स्वरूप में दृष्टिगोचर होती है।

**क. अश्लील शब्द-** तत्सम तद्भव, देशज एवं विदेशज शब्दों के अतिरिक्त बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य में अश्लील या गालियो के शब्दों का प्रयोग भी देखने को मिलता है। गालियाँ आँचलिक परिवेश में क्रोध, भावुकता, असक्तता व असमर्थता आदि भावानुभावों को व्यक्त करने का सर्वाधिक सशक्त माध्यम होती है जिनका प्रयोग शिक्षित-अशिक्षित सभी वर्ग के लोग करते हैं। बिस्मिल्लाह जी ने अपने उपन्यासों व कहानियों में आँचलिकता की यथार्थता बनाए रखने के लिए विभिन्न पात्रों के माध्यम से अग्रलिखित गालियाँ दिलवायी है- हरामजादी, कमीनी, लुच्ची, कुतिया, पतुरिया, छिनार कुलच्छनी, हरामी, भोसडियावाले, झटहियों गाँउ धावै, बुरचोदी, हरमिया तथा यार रखना आदि।

**आवृत्तिमूलक शब्द-** आवृत्तिमूलक शब्द ऐसे शब्द होते है जो युग्म में रहते हैं। युग्म के पहले शब्द की ध्वान्यत्मकता से ही दूसरे शब्द की उत्पत्ति होती है। कभी-कभी ध्वान्यत्मकता के स्थान पर भावनात्मकता भी आवृत्तिमूलक शब्दों की निर्मात्री होती है। कुछ संदर्भों में, युग्म का पहला या दूसरा शब्द केवल आवृत्ति मात्र होता लेकिन निरर्थक होता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में निम्नलिखित आवृत्तिमूलक शब्दों का

प्रयोग किया है- चाल-ढाल, हट्टा-कट्टा, इर्द-गिर्द, कहना-सुनना, ओढ़ना-बिछाना, प्यार-मुहब्बत, रख-रखाव, दुबला-पतला, मोटा-पतला, कहा-सुनी, काम-धंधा छोटी-मोटी, टाट-पट्टी, लौडे-लपाड़े, लोटा-डोर, चमार-सियार, रहन-सहन, दिन-रात, भूख-प्यास, हरा-भरा, दाल-चावल, पढ़ाई-वढ़ाई, पढ़-लिख, आमने-सामने, दाल-सब्जी, पूडी-सब्जी, खेत-वेत, दुख्ख-दर्द, यदा-कदा, मौज-मस्ती, ऐरे-गैरे, खाने-पीने, झगड़ा-वगड़ा, इधर-उधर, खेत-वेत, दुख-दर्द, कहा-सुनी बची-खुची पण्डित-वण्डित एवं सोसायटी-फिसाइटी आदि।

**ग. मुहावरों तथा कहावतों का प्रयोग-** कथा-साहित्य के कलापक्ष के भाषिक सौंदर्य, सामर्थ्य तथा प्रभावोत्पादकता आदि की वृद्धि में शब्दों के बाद सर्वाधिक योगदान मुहावरों कहावतों और लोकोक्तियों का रहता है। इनके प्रयोग से भाषा की शक्ति, अर्थवत्ता, प्रवाहमयता, अभिधार्य, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ में अभूतपूर्व वृद्धि होने के साथ ही उसमे रोचकता, सजीवता एवं सूत्रात्मकता प्रादूर्भूत हो जाती हैं। इनमें से मुहावरा कुछ पदों का समूह होता है। दरअसल वाच्यार्थ से भिन्न केवल लाक्षणिक अर्थ प्रकट करने वाले पद या पदबंध को मुहावरा कहते हैं जिनके प्रयोग से भाषा के सौंदर्य तथा चटपटेपन में वृद्धि हो जाती है। मुहावरों को लक्षणा शब्द शक्ति का उदाहरण कहा जाता है जिनके प्रयोग से भाषा सशक्त एवं अभिव्यक्ति तीव्र हो जाती है। मुहावरों की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि इसका अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता है अर्थात् मुहावरों को जब तक वाक्य में प्रयोग न किया जाय तब तक ये पूर्ण अर्थ नहीं प्रकट करते हैं। ये पूर्णतः प्रयोग आश्रित होते हैं तथा इनसे पूर्ण अर्थ प्राप्त करने के लिए उनका वाक्यों में प्रयोग करना अपरिहार्य होता है।

भाषा के प्रति अत्यधिक सजग और संवेदनशील रहे। बिस्मिल्लाह जी ने अपने कथा-साहित्य की भाषाई गतिशीलता, रोचकता, सजीवता लाक्षणिकता, सूत्रात्मकता एवं प्रभविष्णुता की समृद्धि हेतु अनेक मुहावरों का प्रयोग किया है जिनमें से अग्रलिखित 'हैं- कलेजा मुँह को आना, दुधारू गाय की लात सहना, घाव को कुरेदना, उल्टी खोपड़ी का

होना, गुस्सा ठंडा होना, कौवा शोर मचाना, दांतों तले उंगली दबाना, चूॅं-चूॅं का मुरब्बा बनाकर रख देना, अंगुठा दिखाना, धरती खिसक जाना, खून पीना, पेट में चूहे कूदना, आग बबूला होना, होसले पस्त होना, गधे की सींग की भाँति गायब होना, कलेजा पक जाना, घर में भूंजी भांग भी न होना, आपे से बाहर आना, तिलांजलि देना, मनभारी होना, आँखों में खून उतर आना, चेहरा बुझ जाना, फूट-फूटकर रोना, नाक-भौ सिकोड़ना, मन हरा होना, अंग-अंग टूटना, अंगारों पर लोटना, सीने पर साँप लोटना, आस्तीन का शाप होना, आटा गीला होना, अक्ल दौड़ाना, अनसुनी करना, आपे में न रहना, ईद का चाँद, उलटी गंगा बहाना, ऊपर-ऊपर, कंधा देना, कसम खाना, कलेजा ठंडा करना, कान काटना, खून उबलना, गले लगाना, गोबर गणेश, घाट-घाट का पानी, गंगा नहाना, घर बसाना, चार चाँद लगाना, चेहरे का रंग उड़ना, चने चबाना, जहर का घूँट पीना, जूते चाटना, जहन्नुम में जाना, जौहर दिखाना, झख मारना, टांग अड़ाना, डंक मारना, तूती बोलना, तेवर बदलना, दिन काटना, धुन सवार होना, नाच नचाना, नाक रगड़ना, पानी फिर जाना, भूट चढ़ना, मोटा आसामी, रंग दिखाना, हवा निकल जाना, हाथ खाली होना, हाथ पसारना, हाथ जोड़ना, सिर हिलाना आदि।

कहावतों को ही लोकोक्तियाँ कहा जाता है तथा कहावतें या लोकोक्तियाँ लोक संस्कृति और लोक साहित्य की स्थायी निधि होती हैं। जब तपे-तपाये या अनुभवजन्य जीवन का निचोड़ अथवा सार धीरे-धीरे सामाजिक अनुभव के रूप में प्रसिद्ध हो जाते है तब उनका प्रयोग आर्ष या सुक्तिपरक वाक्यों के रूप में होने लगता है। कालांतर में जीवनानुभवों के यही निचोड़ जागृत विवेक तथा शालीन परम्पराओं के प्रतीक बन जाते हैं जिन्हें कहावतें या लोकोक्ति के नाम से जाना जाता है। जिस भाषा-समाज के पास जितनी अधिक मात्रात्मकता में कहावतें उपलब्ध होंगी वह भाषा-समाज उतना ही अधिक समृद्ध और सशक्त होगा। कहावतों के प्रयोग की भाषा की अभिव्यंजना शक्ति एवं सौंदर्य में स्वाभाविक वृद्धि हो जाती है, क्योंकि इसमें किसी समाज अथवा देशकाल एवं वातावरण का

युग सत्य सन्निहित रहता है। इसके प्रयोग से भाषा में निखार तथा अभिव्यक्ति में सटीकता आती है। कहावतें कम शब्दों ने बड़ी बात कहने का सर्वोत्तम माध्यम होती हैं और उनकी सर्वप्रमुख विशेषता यह होती है कि मुहावरों के विपरीत ये अपनी पूर्णत: स्वतंत्र सत्ता रखती हैं अर्थात् वाक्य में प्रयोग किए बिना भी ये अपना पूर्ण अर्थ उद्घाटित करती है। इसकी इन्ही प्रवृत्तियों के कारण इनके प्रयोग से भाषा और भाव मे मणि कांचन योग उत्पन्न हो जाता है। बिस्मिल्लाह जी ने मध्यप्रदेश के मंडला-हिनौता से लेकर उत्तर प्रदेश के वाराणसी तक के स्थानीय परिवेश में प्रचलित हिन्दी, अवधी, भोजपुरी एवं उर्दू की अनेक कहावतों के प्रयोग से अपने कथा-साहित्य की भाषा में चार-चॉंद लगाया है। उनके कथा-साहित्य में प्रयुक्त कुछ कहावतें इस प्रकार हैं-

1. मूड मुडाए तीन नफा, गर्दन मोटा, फिर सफा, दुई पइसा तेल बचा।

2. माई होत त मौसी है काहे गोहराइतो

3. चट मंगनी पट ब्याह

4. एक ही थैली के चटटे-बट्टे।

5. गुगरिये अनाज, जोलहवें राजा

6. बिन धरनी घर भूट का डेरा |

7. थाली हेराती है, तो लोग उसे सुराही ही में ढूढ़ते हैं।

8. भूख ही ऐसी चीज है, जो शेर को भी बिल्ली बना देती हैं।

9. दाम न कौडी, नाक छिदावन दौड़ी।

10. जाके नर्व अरु जटा बिसाला, सोइ तापस परसिद्ध कलिकाला।

11. सौ बीमारों के एक अनार हो गए।

12. घर का जोगी जोगड़ा आन गाँव का सिद्ध।

13 घी कहा अडान? थरिये में।

14. गुरु से कपट मित्र से चोरी या होय आंधर या होय कोढ़ी ।

17. लरिकन हम छुइतना ही, जवानन के नसताई। हाँ बुढ़वन के हम छोड़ित नाँही केतनौ ओढऐ रजाई।

16. समरथ के नहिं दास गोसाई।

17. बापै पूत पिता पर घोड़ा, बहुत नहीं तो थोडै-थोडा।

18. जेकर बदरिया उहै से नांचै

19. एक हाथ ककरी अउर नौ हाथ बीजा करेंगी।

20. आपन घर मे अँधियारा करके मंदिर में गए हैं दिया बारने।

21. मगर से बैर करके पानी में क्या रहा जा सकता है।

22. दिन-भर बाहर रात निबदर, बहे पुरवाई झब्बर-झब्बर

23. कहें घाघ कुछ होनी होई काठ कृआँ से धोबी धोई।

24. चीलर के डर से कोई अपनी कथरी छोड़ देगा।

25. बिल्ले के भाग से छीका टूट गया था।

20. वही मसल है कि रहें भुई चाटें चादर।

27. जाने कारन चोरी करो वही कहे चोखा।

28. करिया अच्छर भैंस बराबर।

29. रॉड-सॉड सीढ़ी-सन्यासी, असे बचैत सेवै कासी।

30. कोउ नृप होय हमें का हानी, चेरी छॉड़ न होऊ बै रानी

31. जाके अंगना बहे नदी, सोक्यो मेरे पियास।

32. जब राजा नल पर विपत परी तब भूॅंजी मछली जल में गिरी।

33. पेटै के कारन नाचत-गावत पेटै के कारण बाजा बजावत।

34. जहाँ पेड़ न रूख वहाँ रेर्डे महापुरुष।

35. अंधों में काना राजा।

36. एक हाथ से ताली न बजना।

37. चोर-चोर मौसेरे भाई ।

38. दीवारों के भी कान होते हैं।

39. न रहेगा बॉस न बजेगी बाँसुरी।

40. भैंस के आगे बीन बजाना।

41. मार के आगे भूत भागना ।

**घ. लोकगीत, कविता एवं शेर-शायरी आदि का प्रयोग**

बिस्मिल्लाह जी ने अपने कथा साहित्य की भाषिक सामर्थ्य एवं अभिव्यक्ति क्षमता बढ़ाने के लिए अपने उपन्यासों और कहानियों में लोकगीत, गीत, कविता तथा शेरो-शायरी आदि का भी भरपूर प्रयोग किया है। उनकी कहानियों तथा उपन्यासों के अनेक पात्र अपनी भावुकता, परिस्थिति एवं मन:स्थिति के अनुरूप गीत या लोकगीत गाते अथवा कविता शायरी करते दिखाई देते हैं, जिनमें से कुछ का परिचयात्मक विवरण निम्नलिखित प्रकार से है-

**लोकगीत-** बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की भाषिक सौंदर्य में वृद्धि करने वाले कुछ लोकगीत इस प्रकार के हैं-

1. "अहा हाय

हाय रे सींचे ला जाबो न

साजा तरेवा डबरा

सींचे लजाबो न

तउंजकंझड! तुंजकझड! (मॉदर की आवाज)"3

2. मोर बलम नदान मोर देहियाँ गुलाबी रंग होईगै

पाँच पचासे की चोलिया

बंद लागे हजार

पहनाने वाली छोकरिया

चली बहियाँ झलाप

लौंग के लगी है रूख

ओखी पतली है डार

समझे समझ गोरी तोरले

माल है बिरान...।"4

3. "रीनी झीनी आना...

लंका ओढ़ै बंका ओढ़ै ओढ़ै सदल कसाई रामा

ओढ़ै सदल कसाई

धुर पहलाद विभीषण ओढ़ै ओढ़ै मीराबाई

रीनी झीनी आना ....

नामै आरी ना मैं भोरी पूत जनाजन हारी रामा

पूत जनाजन हारी

तिन-तिन लरिका गोद खेला एंव हौं मैं अभी कुवॉरी

रीनी झीनी आना...।"5

4. "बिचिया बाजार में बिकैला पेटी हो बिकैला पेटी

भोया नहि बोले मामा तुमरे बेटी ला चिन्हाय देना।

मछरी तमारे फँसावे पढ़िना

हाँ फैलावै पढ़िना

मोला ठपि ठगि राखे अढाई महिना

हाँ चिन्हाय देना...।"6

5. "निबिया बिरिछ जिनि काटा मोटे बाबा

निबिया के छटवार छाँव रे।

निबिया के कटलेट चिरइया उडि जर है

होई जाई सून सगरो गाँव रे।

निबिया बिरिध बाबा बिटिया की नाई

टूट जइहे तोर करि छाँव रे।"7

6. "भइया मोरि अइहें अनवइया

सवनवा में न जइबो ननदी

भइया मोरि.....।"8

7. "पहिले बइर सम, फिर भइले टिकोरा।

सैंयाजी के हाथ लागल हो गइले सिंधोरा।"9

8. "नजर लागी राजा तोरे बंगले पर

नजर लागी राजा

जो मैं होती राजाबन कय कोयलिया

कुहुक रहती राजा...

जो मै होती राजा कारी बदरिया

बरस रहती राजा......

जो मैं होती राजा जलकइ धड़लिया

झलक रहती राजा...

जो मैं होती राजा तुम्हारी दुल्हनिया

झलक रहती राजा...

जो मैं होती राजा तुम्हरी दुल्हनिया

झमक रहती राजा...।"10

9. "डोंट टच माइ बाडी मोहन रतिया

हाँ मोहन रसिया

हा मोहन रसिया

डोंट टच माइ बाडी मोहन रतिया।

यूआर एसन ऑफ-श्री बिंदराबन

एंड आई एमए डाटर आफ

गोकुल रसिया

डोंट टच माइ बाडी मोहन रसिया...।"11

10. "मोरी धानी चुनरिया उतर गमके

मोरी धानी उमरियान इहर तरसे

सोने के थारी में जेवना परोसेवॅ

सोने के थारी में...

मोर जीयनवाला विदेश तरसे...।"12

11. "एक दिन सखियन संग सैंया

चली गयी गुलजार में

नेहरू जी को गुलाब में देखा

गाँधी जी को अनार में

एक दिन सखियन संग सैया... ।"13

12. "घोड़े के आये घुघरा बाजे

सिर सोहै रैल बेल का सेहरा

मकना के आगे मोरला नाचे रे

कमर में है गुजराती पटुका

झुल्लर के आगे मोरला नाचे रे

पाँव सोहे मखमल का जूता

छत्तूर के आगे मोरला नाचे रे ।"14

13. हसन कदादी चउक धरि रोवैं

चउक धरि रोवैं

जरै मोर जमीन असमनवा रे हाय

अगिया जौ लागत जल से बुझव टेव

दूध से बुझवते वे

कोखिया अगिन के बुझावे रे।"15

**कविता-गीत-** बिस्मिल्लाह जी ने अपने कथा-साहित्य, के भाषाई सौंदर्य की संमृद्धि हेतु विभिन्न कविताओं और गीतों का भी प्रयोग किया है जिनमें से कुछ का उल्लेख निम्नलिखित प्रकार से है-

1. "अजाबे-कब्र से बढ़कर

पुलिस वालो का फंदा है

जो ले देकर बच जाय

वही खुदा को बंदा है।"16

2. "गावहु री सखि गावहु

गाइके सुनावहु हो

सब सखि मिलिजुलि गावहु आजु

कि मंगल गीत हो ...।"17

3. "और....

और इस तरह बीता वह दिन।

आई काली-कलूटी चुडैल जैसी रात।

दूर कहीं बोला एक घुग्घू। असगुना और....

और कसाई ने काट डाला अपना पेड़ रातों-रात।"18

4. "सुनु सिय सत्य असीस हमारी।

पूजिहि मन कामना तुम्हारी॥

×××××××××××××××××

होइहे सोइ जो राम रचि राखा। को करि तरक बढ़ावहि साखा।।"19

5. "रात की ताक में हैं सबेरा

आगे नागिन है पीछे सँपेरा

मुझ पर गुजरेगी इकरात ऐसी

जागकर तुम करोगे सवेरा

जब तलक बाग में है चहकले

जाने किस बन में हो फिर बसेरा।"20

6. "ये अरज तुमसे है मेरी या हेलका

दिल लगाके न दिल को हटा लेना तुम।

बेवफाई न करना कभी भूलकर

गर मुहब्बत किया तो निभा देना तुम।"21

7. "इस छोटे से निर्धन घर में

मधु व्यंजन कैसे पाते।

ओ डोली में जाने वाले

तुम पैदल कैसे आते।

×××××××××××××

तुमने भावो को कुचला है

प्रिय किसी तरह सहलूँगा।

ये तेरे मन के उपवन का

इक फूल नहीं कुचलूँगा।"22

8. "तुला ने तुला घर चोरी की

अउर कुंभ गई चुराया

फिर करने ऐसा किया

कि मेख को दिया जलाया।"23

9. उजाड़ दे मेरे दिल की दुनिया

सुकूँ को मेरे तबाह कर दो

मगर यही इल्तिजा है मेरी

इधर भी अपनी निगाह कर दे।"24

10. "गहरी नदिया अगम बहे पनिया

पिया चलते परदेसवा बिहरेला रामा, छतिया

जो हम जनती ए लोभिया जइबे रे विदेसवा

पिया के पयेटॅवा ए लोभिया छिपइती रे अचरवा।"25

11. यह नाव हमारी है

हमदोनों की हमदोनो इसे साथ-साथ खेएँगे

साथ-साथ पार होंगे, साथ-साथ डूबेंगे।"26

12. "हमने जिस भवन का निर्माण किया है।

वह धाराशायी हो जाएगा तब

तब तुम क्या करोगी।"27

13. नीद दूर मेरी आंखों से, और न कोई दीप जले

छाया चारों ओर अंधेरा, मुझे उनीदीरात खले

बॅधी-बॅधाई लय में केवल घड़ी यहाँ टिक-टिक करती

एक यही आवाज निरन्तर मुझे सुनाई है पड़ती

और कहीं पर होती मानो धीमी-धीमी सी सरसर

जैसे-जैसे दो बुढ़ियाँ कुरती हो, धीरे-धीरे खुसर-पुसर

चूहे जैसी कूॅंद-फाँद सा, दौड़-धूप सायद जीवन....।28

14. "सलामे-हसरत कबूल कर लो

मेरी मुहब्बत कबूल कर लो

उदास नज़रें तड़प-तड़पकर तुम्हारे जलवों को ढूंढती है

जो ख्वाब की तरह सो गये उन हासीन लम्हों को ढूँढ़ती हैं।

अगर न हो नागवार तुमको

अगर न हो नागवार तुमको

तो ये शिकायत कबूल कर लो

मेरी मुहब्बत कबूल कर लो।"29

**कव्वाली, शायरी, गजल-** बिस्मिल्लाह जी की कहानियों और उनके उपन्यासों में कव्वाली, शायरी एवं गजल आदि का भी प्रयोग देखने को मिलता है, जिनसे भाषा में वाचालता तथा सौंदर्य की सहज वृद्धि देखी जा सकती हैं। उनके द्वारा व्यवहृत कुछ महत्वपूर्ण शायरी तथा गजले इस प्रकार से हैं-

1. "चाहा था हाल जानना, कासिद को भेजकर

मगर... कासिद हो चला आया दुखड़ा ही उठाकर।"30

2. "जेहाले-मिस्कीं मकुन तगाफुल

दुराय नैना बनाय बतियाँ

हा दुराय नैना...............।"31

3. "बस्ती मिली मकान मिले खामो दर मिले

मैं ढूँढ़ता रहा कि कही कोई घर मिले।"32

4. "दुख ही जीवन की कथा रही

क्या कहूँ आज जो नहीं कही।"33

5. "गए फारस बेटा सीख आए फ़ारसी बानी

आब आब कहकर मर गए खटिया तरे रहा पानी।"34

6. "इक चश्म है खुर्शीद दिगर चश्म है गुच्ची

अल्ला मियाँ ने ले ली है। इक आँख समुच्ची।"35

7. "सरहाने 'मीर' के अहिस्ता बोलो,

अभी तक रोते रोते सो गया है।"36

8. "इक मुजस्सम ग़ज़ल है मेरे सामने

ग़ज़ल देखकर मै ग़ज़ल कह रहा हूॅं।"37

9. "हम खर मिटाव कइली ह रहिला चबाय के

भवल घयलवा दूध में खाझा तोरे बदे।"38

10. "बड़े शौक से सुन रहा था जमाना

हमी सो गए दास्ता कहते कहते।"39

11. इक हसीं शहर बसा है लबे दरिया देखो

शहर की गोद में बहती हुई गंगा देखो

मौज-दर-मौज मचलती हुई किरनो की समाँ

सुबहे-दम शहरे-बनारस का ये जलवा देखो

ये बनारस के ये हंसी घाट ये दिलकश मंजर

हाँ इसी शहर में रहते हैं हजारों बुनकर।"40

12. "दरो दीवार पे हसरत से नज़र रखती हू॑ं।

गाँव वालों खुश रहो मैं तो सफर करती हूँ।

पैडिल पे पाँव रखा टी चेन उतर गई

मैंने जो आँखमारी, तो गुड्डन की पैंट उतर गई।"41

13. "पुलिस वाले मरते नहीं

जिंदा दफनाए जाते हैं...।"42

14. "न पूछ रहगुजर दोस्त जिस किसी सेतू,

तू तो खुद रहनुमा है, तेरे पीछे है हम।"43

15. "रहिमन ओछे नरन ते, बैर भली ना प्रीत

काटे-चाटे स्वान के, दोऊ भाँति विपरीत।"44

उपर्युक्त भाषिक प्रवृत्तियों के अतिरिक्त अब्दुल बिस्मिल्लाह के कथा-साहित्य में कुछ और भी विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती है जिनसे न केवल उनकी अभिव्यक्ति प्रखर होती है बल्कि उनकी साहित्यिक सर्जनाएँ भी विशेष प्रभावोत्पादकता अर्जित कर लेती है। वैसे तो ये विशेषताएँ लगभग सभी कथाकारों की कहानियों एवं उपन्यासों की भाषा में अंतर्भुक्त होती है लेकिन बिस्मिल्लाह जी के कथा साहित्य की भाषा में इनकी प्रायोगिक सजगता ने इनकी

कहानियों और उपन्यासों को यथार्थता के और अधिक समीप स्थित कर दिया है। इसलिए इन प्रवृत्तियों पर संक्षिप्त दृष्टिपात कर लेना भी आवश्यक हो जाता है। बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की भाषाई-प्रवृत्तियाँ अग्रलिखित हैं-

**1. स्वाभाविकता-** स्वाभाविकता बिस्मिल्लाह जी की कहानियों और उपन्यासों की भाषा की प्रमुख विशेषता है। इन्होंने अपने उपन्यासों तथा कहानियों उन्ही के शब्दों का प्रयोग किया है जो स्वाभाविक रूप से परिवार एवं समाज में आपसी संवाद या जन संचार के समय प्रयुक्त होते हैं। इनकी कथात्मक रचनाओं में प्रयुक्त तत्सम, तद्भव, देशज-विदेशज, गालियों के शब्दों को देखकर कही से भी यह नहीं लगता कि :रचनाकार ने उन्हें जबरन घुसेड़ा है। भाषा की यही सरलता और स्वाभाविकता उनकी साहित्य मर्मज्ञता सिद्ध करती है, जिसके अंतर्गत उनके समालोचनात्मक सिद्धांतों, भाषा वैज्ञानिक पद्धतियों, व्याकरणिक व काव्यशास्त्रिय नियमों तथा शब्दकोशीय ज्ञान आदि की बोधगम्यता प्राप्त की जा सकती है। उनकी भाषा की स्वाभाविकता और सरलता का सर्वाधिक उपयुक्त दृष्टांत 'जहरबाद' उपन्यास के अग्रलिखित पैराग्राफ से लगाया जा सकता है- "अम्माँ सुबह-सुबह उठती, झिरियॉ से पानी लाकर बर्तन मांजती, खाना बनाती और टोपर में किराने के चंन्द सामान सजाकर कभी धमन गाँव, कभी बिजौरा और कभी जोगी टिकरिया के लिए निकल जाती इस बदली हुई स्थिति से अब्बा को सुकून हो गया था।"45

**2. संकरता-** संकरता अर्थात् मिश्रण भी बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की प्रमुख विशेषता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों और उपन्यासो में अनेक स्थलों पर मिश्रित भाषा का प्रयोग किया है। इस मिश्रण में कही हिंदी और उर्दू का तो कहीं हिन्दी और अंग्रेजी का रहा है। क्योंकि उर्दू भाषा से बिस्मिल्लाह जी का जन्मना संबंध रहा इसलिए वे अपने कथा-साहित्य में भी इस भाषा के प्रति अपने अतिशय अनुराग का परित्याग नहीं कर सके हैं, लेकिन जैसा कि पहले कहाँ जा चुका है कि उन्होंने उर्दू के बहुप्रचलित शब्दों का ही

प्रयोग किया है जिससे यह भाषाई मिश्रण या संकरता भावाभिव्यक्ति एवं भावग्राह्यता में किसी तरह का अवरोध न ही उत्पन्न करता है। यही स्थिति हिन्दी और अंग्रेजी शब्दों के मिश्रण में भी दिखाई देती है, जहाँ हिन्दी के साथ अंग्रेजी के बहुप्रचलित शब्दों को ही प्रयोग में लाया गया है। उदाहरण के साथ लिए 'झीनी झीनी बीनी चदरिया' उपन्यास और तलाक के बाद कहानी के निम्नलिखित अवतरणों को देखा जा सकता है- "मऊ की ओर जाने वाली पैसेंजर, एक ट्रेन एक घण्टा लेट है। मतीन अलईपुर स्टेशन के प्लेटफार्म पर अपना झोला लिए इधर-उधर टहल रहा है। उसके अन्तर मन में धौकनी जैसी कोई चीज चल रही है। स्टेशन की दीवारो पर तरह-तरह के पोस्टर लगे हुए हैं।"46 डाक्टराइन के पति चूँकि होम्योपैथी की दवाइयाँ बाँटते हैं, इसलिए यह डाक्टराइन हो गई हैं। दरअसल इसके पति अरबी में पी॰ एच॰ डी॰ कर रहे हैं। सुपर-वाइजर से मतभेद होने के कारण थीसिस मंजूर नहीं हो सकी। ऐसी स्थिति में होम्योपैथी का पत्राचार पाठ्यक्रम पूरा करके ये डॉक्टर हो गए।" 47

**3. क्लिष्टता-** बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियो तथा उपन्यासों में कहीं-कहीं बहुत अधिक क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग किया है। कहीं संस्कृत के श्लोक और सूक्तियाँ तो कहीं भाषा विज्ञान, व्याकरण और काव्यशास्त्र के शब्दों के प्रयोग से उनके कथा-साहित्य की भाषा कहीं-कहीं क्लिष्ट हो गयी, हालाँकि ऐसे उदाहरण कम ही देखने को मिलते हैं। मुखड़ा क्या देखे- उपन्यास का अग्रलिखित अंश भाषाई क्लिष्टता का ही उदाहरण प्रस्तत करता है- "यण संधि एक जटिल संधि है । इसका सूत्र जानते हो ? नहीं। तुम्हारे अज्ञान का कारण में समझता हूँ। खैर सुनो, इको यणचइ। अर्थात् इक: स्थान यण स्वादचि। समझे? नहीं? इसे समझने के लिए यह जानना आवश्यक है कि 'इक' क्या है और 'यण' क्या है? तो सुनो। शंकर भगवान के डमरू से निकली हुई ध्वनियों के आधार पर पाणिनी महाराज ने अष्टाध्यायी के मूल सूत्र की रचना की है जिसे माहेश्वर सूत्र कहते हैं।"48

**4. स्थानीयता-** स्थानीयता या ग्राह्यता भी बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की प्रमुख विशेषता है, जिसके अंतर्गत उन्होंने अपनी कहानियों और उपन्यासों में ग्रामीण जनजीवन में प्रयुक्त होने वाले आम बोलचाल के शब्दों अंग्रेजी शब्दों विकृत रूपों तथा विपर्यस्त शब्दों का भरपूर प्रयोग अथवा स्थानीय भाषा-बोली के इन शब्दों का चयन उन्होंने कहानियों और उपन्यासों के कथानक, पात्र एवं उनके चारित्रिक विकास तथा देशकाल और वातावरण के अनुरूप दिया है। उदाहरण स्वरूप 'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' उपन्यास में वाराणसी के बुनकर समाज की जीवन स्थितियों का चित्रण किया गया है। अशिक्षित होने के कारण तथा भाषा-विज्ञान और व्याकरण शास्त्र के नियमों का सम्यक ज्ञान न होने के कारण बुनकर अंग्रेजी के शब्दों को तोड़-फोड़कर बोलते हैं तथा अपनी भाषा में स्थानीय शब्दों (अवधी-भोजपुरी बोली के शब्दों) को अधिक से अधिक महत्व देते हैं, दृष्टांतत:-

"इ सोसायटी-फीसाइटी से का होइए म्याॅं

मतीन का दिमाग खराब हो गोवा है, अऊर कुछ नाही?

फिरदइए तऊ कर्जा होइए म्याॅं

अऊर का ओ के फिर अदा भत करके होइए।

अऊर नाहीं का फोकट में मिल जइए!

फिर एतनी आसानी से मिलिए म्याॅं पइसा

अरे गिरसलोगन से बचिए तबन मिलिए!

अऊर नाहीं तो का!

कम्याँ सुसाइटी बन जइए त हमरो माल सिंगापुर-बॅंकाक में बिके?

युवाओं तक देख लेव।"49

**5. सूत्रात्मकता-** सूत्रात्मकता का अर्थ होता है भाषा को सूत्र की प्रकृति में प्रयोग करना। जब अधिक से अधिक भावों, विचारों एवं अनुभूतियों आदि का सूत्र वाक्यों अर्थात् बहुत कम या नपे-तले शब्दों में अभिव्यक्त किया जाता है तो इसे ही भाषा की सूत्रात्मकता कहा जाता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपने कथा-साहित्य में अनेक स्थलों पर सूत्रात्मक भाषा का प्रयोग किया है, जिसमें उनका प्रत्येक शब्द सार्थक, संदर्भवान एवं प्रभावशाली रहा है। इस सुत्रात्मक भाषा के प्रयोग द्वारा उन्होंने बहुत कम शब्दों में बहुत अधिक कहने का प्रयास किया है जैसे 'समर शेष है' उपन्यास का अग्रलिखित अंश द्रष्ट्रव्य है- "जिन्दगी में जो कुछ भी घिनौना है, कुरुप है, असुन्दर है बिभत्स है उन सबसे प्रायःहम नफरत करते हैं और उन्हें प्रकट करने में शर्म महसूस करते हैं। लेकिन जिसे हम सुन्दर और पवित्र समझते हैं जीवन को सुंदर और पवित्र बनाने में वह बहुधा व्यर्थ सिद्ध होता है। जीवन की सम्पूर्ण पवित्रता संभवतः उसके घिनौनेपन और उसकी बीभत्सता की प्रेरणा से ही जन्म लेती है।"50 इसी तरह की सूत्रात्मकता भाषा उनके अन्य उपन्यासों और कहानियों में भी यत्र-तत्र सहजता से दिखाई दे जाती है।

**6. प्रवाहात्मकता-** बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की भाषा में निरंतरता या प्रवाहात्मकता दिखाई देती है। भाषा के इस प्रवाह में प्रकृति की आंचलिकता एवं वस्तुओं-पदार्थों आदि की विविधता कहीं भी अवरोधक नहीं बनी है बल्कि उसने भाषा के प्रवाह को और भी अधिक तीव्र कर दिया है; उदाहरणतः "सुबह हुई, बादलों से लुका-छिपी खेलते सूरज ने बलापुर के मंदिरों, गड़हियों, तालाबों और आस-पास फैले जुते-अनजुते खेतों पर अपनी धब्बेदार किरणों का जाल फेका, चिड़ियों ने उड़ान भरी, गाये रम्भाई, मोटी बउ ने पूजा के गीत गाए और इसके साथ ही गाँव के जीवन में एक जबरदस्त हलचल हुई। जब्बार? मोलवी कुल्ला-दतौन करके सीधे पं॰ रामवृक्ष पाण्डेय की बखरी में पहुंच गए।"51

भाषा की यही प्रवाहात्मकता 'खंड-खंड आदमी' शीर्षक कहानी में भी देखी जा सकती है- "सूरज लगभग अस्त हो चला है और कार्तिक की हल्की सर्दी का स्पष्ट आभास होने लगा है। नदी पार से आने वाला गाय बैलों का झुंड अब नदी में उतर रहा है और उनकी घंटियों की आवाज वातावरण में घुलने लगी है। खजूर से कहीं धुआं उठ रहा है, जो सर्दी में गरमाहट का एहसास भर रहा है। बबूल के सुघड़ दरख्तों के बीच तटस्थ रहने वाला अपेक्षाकृत चौड़ा रास्ता कुल मिलाकर बड़ा भला लग रहा है।"52

**7. चित्रात्मकता-** किसी प्राकृतिक दृश्य अथवा घटना-व्यापार आदि का भाषा के द्वारा इस तरह से चित्रण या वर्णन करना कि पाठक अथवा सहृदय के मानसिक पटल पर उस दृश्य या घटना-व्यापार का प्रतिबिम्ब निर्मित हो जाए, भाषा की चित्रात्मक विशेषता कहलाती है। दरअसल रचनाकार किसी प्राकृतिक दृश्य, मनोभाव या घटनावृत्त के वर्णन-विवेचन को यथार्थपरक बनाने के लिए शब्दों-पदों के माध्यम से जो दृश्य अथवा बिम्ब निर्मित करता है उसे ही भाषा की चित्रात्मकता कहा जाता है। कविता में यह कार्य अधिकांशतः बिम्बो एवं प्रतीकों के माध्यम से किया जाता है जबकि गद्यपरक रचनाओं में दृश्यांकन का यह कार्य चित्रात्मकता के द्वारा किया जाता है। बिस्मिल्लाह जी के अपने कथा-साहित्य में असंख्य स्थलों पर चित्रात्मक भाषा का प्रयोग किया है जिसके कारण उसकी रचनाओं की यथार्थता और स्वाभाविकता में अतुलनीय वृद्धि हुई है। 'मुखड़ा क्या देखें' उपन्यास में श्रावण मास का चित्र निर्मित करते हुए उपन्यासकार ने लिखा है- "सावन का महीना था। खूब झमाझम वर्षा हो रही थी। खेतों में धान के पौधे लहरा उठे थे। बगियों के पेड़-पालो नहा-धोकर तरो-ताजा दिखाई पड़ रहे थे । पानी में रहने वाले डोहड़ा साँप तालाब में तो डुबकियाँ मार ही रहे थे, कभी-कभार खेतों-मेड़ों पर भी बैठे हुए दिखाई पड़ जाते थे । ताल-तलैया और नदी-नाले तो क्या बाग-बगियो के गड्ढों में इतना बरसाती पानी भर गया था कि उसमे मेढ़को-मेढ़कियो के अलावा भांति-भाँति की छोटी-छोटी मछलियाँ अठखेलियाँ करने लगी थी।"53 इसी तरह 'फोलाद बनता आदमी' शीर्षक कहानी में एक कमरे का चित्र इस प्रकार में उकेरा गया है-

"उस कमरे का ढाँचा ड्राइंग रूम से मिलता-जुलता था, पर वह उड़ती हुई दृष्टि में चौपाल ही लगता था। दीवारों पर बनी खुली आलमारियो में तकिए, जूतें तथा शराब की बोतलों के खाली डिब्बे, समान हैसियत से भरे पड़े थे और पिछले कमरे के दरवाजे से उस कमरे की खिड़की तक जो डोरी बंधी हुई थी उस पर गंदे लगोट तथा गमछे टगे हुए थे। एक ओर दीवार से सटकर एक चारपाई खड़ी थी और फर्शपर जो लम्बी चौड़ी दरी बिछी थी उस पर कुछ खास किस्म के प्राणी लेटे हुए थे।"54

**आलंकारिकता-** वैसे तो अलंकारों का प्रयोग केवल कविताओं में ही होता है लेकिन अलंकृत भाषा गद्य एवं पद्य दोनों विधाओं से संबंधित रचनाओं की हो सकती है। भाषा की आलंकारिकता से अभिप्राय भाषा के लालित्य सौंदर्य और सजावट आदि से होता है। गद्य की भाषा में आलंकारिकता शब्दों के लालित्य आदि से उत्पन्न होती है। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में अनेक स्थलों पर आलंकारिक भाषा का उपयोग किया है, उदाहरण के तौर पर 'रफ़ रफ़ मेल' शीर्षक कहानी का यह अंश देखा जा सकता है- "मगर मौसम की इस छेड़खानी से बेखबर बुद्धु मास्टर अपनी मोटर की सफाई और सजावट में लीन थे जैसे कोई नई व्याही औरत आंधी के बीच खेत की मेड़ पर बैठी महावर से अपने पाँव रंग रही हो और आंखों में काजल की रेखा बेना रही हो।"55

**9. बिम्बात्मकता-** वैसे हो बिम्ब और प्रतीक आदि भाषिक विशेषताएँ काव्य-भाषा को ही सुशोभित करती है लेकिन प्रतिभावान रचनाकार गद्यपरक सर्जनाओं में भी बिम्ब आदि का सफल व प्रभावशाली प्रयोग करके अपने भाषा की सामर्थ में वृद्धि कर लेते हैं। रचनाकार के अंतर्मन में किसी वस्त्र या घटना व्यापार आदि का जो छायाचित्र निर्मित होता है, उसे ही बिम्ब के नाम से जाना जाता है। इसी बिम्ब को सर्जक द्वारा भाषा के माध्यम से रचना में उत्कीर्णित करने वाली भाषा को बिम्बात्मक भाषा के नाम से जाना जाता है। बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की भाषा में बिम्बात्मकता प्रधान प्रवृत्ति के रुप में अंतर्भुक्त रही है, जिसके

द्वारा इन्होने अनेक स्थलों पर दृश्य या काल्पनिक प्रतिविम्ब उदाहरण स्वरूप 'समर शेष है' उपन्यास में एक स्थान पर गाँव की सड़कों और दुकानों का बिम्ब कुछ इस प्रकार से निर्मित किया गया है- "सिर्फ परचून और पान की दुकानों पर टिमटिमाती हुई लालटेन किसी की आँखो जैसी प्रतीति होती थी और बस्ती के बीच से गुजरी हुई कोलटार पुती सड़क उसकी काली जिह्वा की भांति दिखाई पड़ती थी।"56 इसी तरह अपनी कहानियों और अन्य उपन्यासो में भी बिस्मिल्लाह जी ने आँचलिक जीवन की संस्कृति, समाज, राजनीति, धर्म, दर्शन, प्राकृतिक परिवेश, आर्थिक स्थिति तथा जीवनदशा आदि से संबंधित असंख्य बिम्ब रचते दिखाई देते हैं। ध्यातव्य है कि इन बिम्बों के विधान के कारण ही उनकी कथागत रचनाएं अधिक यथार्थवादी बन सकी है।

**10. प्रतीकात्मकता-** प्रतीक भी काव्य-भाषा के केन्द्रीय घटक होते हैं जो कि एक विशेष चिह्न के रूप में किसी अमूर्त, वस्तु, घटना या भाव-विचार आदि का प्रतिनिधित्व करते हैं। लेकिन एक सिद्धहस्त रचनाकार अपनी गद्य की भाषा में भी प्रतीकों का यथेष्ट विधान करके अपनी अभिव्यक्ति को प्रभावशाली एवं सरल जिनके द्वारा वर्णन-विवचन की दृष्टि से बहुत बड़े विषय को एक शब्द या पंक्ति में ही व्यक्त किया जा सकता है। बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की भाषा में प्रतीकों का विशेष स्थान और योगदान रहा है। उन्होंने अनेक स्थलों पर प्रतीकात्मक भाषा के सहारे बड़े से बड़े भावों, विचारो और घटनाओं आदि को बहुत ही न्यून शब्दों में अभिव्यक्त कर दिया है। उदाहरण के तौर पर 'मुखड़ा क्यों देखें' उपन्यास में संध्या की नीरसता को प्रतीकों के माध्यम से इस तरह व्यक्त किया गया है- "संध्या का रूप को तो प्रतिदिन की तरह ही सुनहरा और चिड़ियों के गान से भरा हुआ था मगर उस दिन वह मृतप्राय प्राणी के पीले पड़ गए चेहरे की तरह दिखाई पड़ रहा था। अली अहमद के लिए वह शाम बेहद मनहूस और नीरस थी लग रहा था मानो गाँव में कोई दुर्घटना घट गई हो और गाँव के लोग घर छोड़कर कहीं भाग गए हो। चारों ओर सन्नाटा था झींगुर बोल रहे थे।"57 उपर्युक्त दृष्टांत में अमूर्त संध्या की नीरसता को भरे हुए प्राणी के

पीले चेहरे एवं दुर्घटना जैसे प्रतीको के माध्यम से व्यक्त करके रचनाकार ने अमूर्त के व्यापक-वर्णन विवेचन को संक्षेप में ही पूर्णता तथा मूर्तता प्रदान कर दी है।

**11. व्यंग्यात्मकता एवं भावनात्मकता**- व्यंजना एक महत्वपूर्ण शब्द शक्ति होती है। जो अभिधा एवं लक्षणा शब्द शक्तियों के स्थान पर कार्य करती है। इसी व्यंजना शब्द-शक्ति के प्रयोग से व्यंग्य की उत्पत्ति होती है जिसके माध्यम से साहित्यकार अपने देशकाल और वातावरण या इतिहास की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक विसंगतियों तथा विद्रूपताओं आदि पर व्यंग्य कर रहे हैं। बिस्मिल्लाह जी ने अपने कथा-साहित्य में अगणित स्थलों पर अपने समय के समाज, धर्म, राजनीति, संस्कृति, प्रशासन आर्थिक स्थिति, गरीबी, भूखमरी, भ्रष्टाचार, जातिवाद धार्मिक असहिष्णुता, साम्प्रदायिकता, वोट बैक की राजनीति तथा चुनावी नारेबाजी आदि की स्थिति पर प्रभावशाली व्यंग्य किया है। उदाहरण के तौर पर दंतकथा, उपयास में भारत की परिवहन व्यवस्था में व्याप्त विसंगतियों पर इस प्रकार से व्यंग्य किया गया है- "क्योंकि हिन्दुस्तान की बसों में परिन्दों के भी बड़े टिकट लगा करते हैं। मुझे लगा इस देश का ट्रांसपोर्ट विभाग तो कम से कम हमें मनुष्यों के समान महत्व देता है।"58 इसी तरह भावात्मकता भी भाषा की एक महत्वपूर्ण विशेषता होती है। भावात्मक भाषा का प्रयोग व्यक्तिगत भावनाओं और करुणाजनक स्थितियों के चित्रण में ही किया जाता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपने आत्मकथात्मक उपन्यासों में अपनी करुणा-जनक स्थितियों के वर्णन-विवेचन में प्रधानतः भावात्मक भाषा का ही सहारा लिया है जैसे 'जहरबाद' उपन्यास में अपनी अम्मां की मृत्यु की दशा का वर्णन उन्होंने इस प्रकार से किया है- "एक घाटी में पकरी के एक पेड़ के नीचे अम्मा टेढ़ी-मेढ़ी होकर पड़ी थी। मुॅंह उनका खुला था और कत्थे-रंगे दाॅत फैले हुए थे। पेट पिचक गया था तथा टाँगों पर से धोती सरक गयी थी। उनके विषैले जिस्म पर मख्खियाँ भिनभिना रही थी और रह रहकर पकरी के कच्चे फल उसके निस्पंद शरीर पर पट-पट गिर रहे थे।"59

**तत्समता-** यद्यपि तत्समता बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की प्रमुख विशेषता नहीं है लेकिन उन्होंने पात्रों एवं उनके चरित्रों के अनरूप कुछेक कहानियों और उपन्यासों में तत्सम शब्दों का अत्यधिक प्रयोग किया है। हालाँकि पात्र उनके चरित्र एवं देशकाल और वातावरण के दृष्टिगत तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग किसी भी दृष्टि से अनुचित या असंगत नहीं कहा जा सकता है परंतु उन्होंने पुराणों के बड़े-बड़े श्लोक ही उठाकर रख दिए है जिनसे संस्कृत भाषा का सम्यक ज्ञान न रखने वाले सहृदयों तक भावः विचार सम्प्रेषण में क्षणिक अवरोध उत्पन्न होता है। लेकिन इसे उनकी भाषाई कमजोरी नहीं बल्कि साहित्यिक निपुणता ही कहा जायेगा, क्योंकि इन संस्कृत कि श्लोकों को उन्होंने शिक्षित एवं ब्राह्मण पात्रों के मुख से ही उच्चरित करवाया है- जो कि परम्परा से संस्कृत तथा शास्त्र के विशद् ज्ञाता होते हैं। 'मुखड़ा क्या देखें' उपन्यास में आचार्य शिवपूजन तिवारी एवं पं॰ सृष्टिनारायण पाण्डेय के मध्य होने वाले शास्त्रार्थ में सृष्टिनारायण पाण्डेय अग्रलिखित श्लोक का उच्चारण करते हैं-

"वैश्वानरो विसर्गेतु तु विवाहे योजकःस्मृतः

चतुर्थ्यान्तु शिखी नाम धृतिरग्निस्तथा परे।"60

उपर्यक्त विवेचन-विश्लेषण से स्पष्ट है कि बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य की भाषा में विविधता एवं अनन्य प्रभावोत्पादकता अंतर्भुक्त रही है जिसके कारण ही उनकी भाषा में भावात्मकता, चित्रात्मकता, स्थानीयता, तत्समता, पात्रानुकूलता, प्रवाहात्मकता, प्रतीकात्मकता एवं विम्बात्मकता आदि प्रवृत्तियों का समावेश हो सका है। उन्होंने अपनी कहानियों और उपन्यासों में तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशज, स्थानीय एवं अश्लील आदि सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है जिनसे उनकी भाषा में एक विशेष प्रकार की सजीवता, गतिशीलता एवं प्रभविष्णुता दृष्टिगोचर होती है। इसी तरह उन्होंने अपने कथा-साहित्य में मुहावरों, कहावतों, लोकगीतो, गजलो, शेर, और कविताओं आदि का भी प्रचुर

प्रयोग किया है जिनसे उनकी भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता में चार-चाँद लग गए है। इनकी भाषा में एक विशेष तरह की स्वाभाविकता प्रत्यक्षित होती है जिसमे पात्र और उनके चारित्रिक विकास, उनकी शैक्षणिक स्थिति तथा उनके देशकाल और वातावरण के अनुरूप भाषा का चयन अथवा शब्दों का प्रयोग आदि प्रमुख विशेषताएं कही जा सकती है इन्ही विशेषताओं का संपोषक होने के कारण उनका कथा-साहित्य न केवल यथार्थ की परिभूमि पर उतरने में सफल रहा है बल्कि सामाजिक प्रभावोत्पादकता, साहित्यिक उपादेयता तथा सर्जनात्मकता, उत्तरदायित्व आदि की दृष्टि से देश और काल की साहित्यिक परिधि का अतिक्रमण करने की सामर्थ्य भी संग्रहित कर सका है।

## 5.2 शैलीगत वैविध्य

भावानुभावों विचारों एवं घटना व्यापारों आदि के अभिव्यक्ति परक तरीके को साहित्यिक भाषा में शैली के नाम से अभिहित किया जाता है, जो कि अंग्रेजी शब्द 'स्टाइल' का ही हिन्दी भाषांतरण होता है। साधारण शब्दों में कहें तो कहने या भावों-विचारों को व्यक्त करने के ढंग को ही शैली कहा जाता है। कहानियों और उपन्यासों में प्रयुक्त होने वाली शैली कथानक पात्र एवं उनके चरित्र तथा भाषा के अनुरूप होती है। कथाकार अपनी कहानियों और उपन्यासों में इन्हीं कलात्मक तत्वों के अनुरूप भाव-विचार आदि के प्रकटन हेतु विविध प्रकार की शैलियों का प्रयोग करता है। क्योंकि शैली कहानी या उपन्यास के उद्देश्य को अभिव्यक्ति करने की पद्धति, तकनीकि या रीति होती है इसलिए कहानी और उपन्यास के कलात्मक तत्वों में इसकी विशेष महत्ता होती है। कहानी विधा संरचनात्मक दृष्टि से उपन्यास की समतुल्यता में छोटी आकार की होती है जिसके कारण उपन्यास की तुलना में इसमें शैली का महत्व भी अधिक होता है। कहानीकार जितने अधिक प्रभावी ढंग से कहानी कहेगा, उतना उसकी कहानी में रोचकता और कौतूहलता बनी रहेगी तथा पाठकों का उपयुक्त मनोरंजन भी होता रहेगा। अपनी इसी विशेष प्रवृत्ति के कारण शैली कहानी के

लिए उसके अन्य सभी कलात्मक तत्वों से अधिक महत्व रखती है। शैली को उत्तमता के आधार पर कहानीकार कहानी में अन्य तत्वों में अंतर्भक्त न्यूनता को भी आवरित कर सकता है। यदि उसकी कहानी कहने की शैली प्रभावी एवं विलक्षण किस्म की होगी तो शैली की इस धाराप्रवाहिता में कहानी की समस्त असंगतियाँ बह जायेंगी और पाठकों का तरफ ध्यान ही नहीं जायेगा। भाषा की तरह ही शैली भी रचना के कलापक्ष अर्थात् शरीर का एक महत्वपूर्ण अंग होती है इसलिए रचनाकार भाषा के समान ही शैली को भी अपनी रचनाओं में विशेष महत्व देते हैं। इस महत्ता का एकमात्र कारण यही है कि रचना की कथावस्तु, उसके पात्र एवं चरित्र चित्रण, कथोपकथन, देशकाल व वातावरण भाषा एवं उद्देश्य आदि सभी कलात्मक तत्वों की सफलता, सार्थकता एवं सम्पूर्णता शैली की उत्कृष्टता, निकृष्टता पर ही आश्रित होती है। समकालीन कथाकार अब्दुल बिस्मिल्लाह की प्रतिभा एवं रचनाधर्मिता विलक्षण किस्म की रही है जिसके चलते उन्होंने अपने उपन्यासों तथा कहानियों में कथानक और उद्देश्य के अनुरूप अनेक प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है जिनका संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित प्रकार को दिया जा सकता है-

**वर्णनात्मक शैली-** यह कथा-साहित्य के अंतर्गत भावो-विचारों को अभिव्यक्त करने की सर्वाधिक ख्यातिलब्ध तथा व्यापक आयामिक विस्तीर्णता वाली शैली होती है। इस शैली की परिधि इतनी अधिक विस्तीर्ण होती है कि इसमें लगभग सभी शैलियाँ समाहित हो जाती हैं। इस शैली के माध्यम से किसी स्थिति, घटना, भाव-विचार अथवा क्रिया-कलाप आदि का सहज व तथ्यात्मक वर्णन किया जाता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपने कथा-साहित्य में धार्मिक आयोजनों, प्राकृतिक दृश्यों, घटनाओं, बुनकर समाज की स्थितियों, जीवन-दशाओं राजनीतिक कार्यक्रमों तथा सांस्कृतिक क्रियाकलापों आदि के चित्रण के लिए अधिकांशतः इसी शैली का प्रयोग किया है। उदाहरण के लिए नायिका शीर्षक कहानी में शीत ऋत का वर्णन कुछ इस प्रकार से दिया गया है- "रात थी। और ठण्ड थी। दिसम्बर का महीना पहाड़ पर बर्फ गिरी थी और उसके असर से ठंड यहाँ बढ़ गयी थी। पिछले कई रोज से शीत लहर

बह रही थी। सुबह देर तक धुन्ध छाई रहती और शाम होते-होते हवा कटारी हो जाती। दिन की धूप भी गरम नहीं रह गयी थी। दफ्तरों में बिजली की अंगीठियाॅं जलती थी और घरेलू स्त्रियॉ दिन-दिन भर पार्कों में बैठी रहती थी। राते तो और भी कष्टदायी थी।"61

**2. आत्मकथात्मक शैली-** जब कथाकार कथा कहते समय पात्रों के स्थान पर प्रथम पुरुष के रूप में स्वयं उपस्थित होकर कथा कहने लगता है या फिर कहानी या उपन्यास के कथानक का विस्तार कथाकार पात्रों से न कराकर स्वयं भावो विचारों, घटनाओं या परिस्थितियों के विवेचन-विश्लेषण के द्वारा करता है तब अभिव्यक्ति की इस शैली को आत्मकथात्मक शैली कहा जाता है। साधारण शब्दों में कहें तो कह सकते हैं कि जब कहानी या उपन्यास में कथाकार स्वयं कथा कहने लगता है तो उसके कहने के इस ढंग अर्थात् शैली को आत्मकथात्मक शैली के नाम से जाना जाता है। वैसे तो बिस्मिल्लाह जी ने अपने दोनों आत्मकथात्मक उपन्यासों- 'समर शेष है' तथा 'जहरबाद' में आद्यंत आत्मकथात्मक शैली का ही प्रयोग किया है लेकिन उनके अन्य उपन्यासों और कहानियों में भी यंत्र-तत्र इस शैली का पर्याप्त प्रयोग देखने को मिलता है। उदाहरण के लिए 'अभिनेता' शीर्षक कहानी का अग्रलिखित अंश द्रष्ट्रव्य है- "मुझे पहचान रही है? मैं रहमान हूॅं जा रहा हूँ बानों से मिलने । मेरी पहली शादी उसी से हुई थी उस वक्त तो उसने मुझे ठुकरा दिया था, पर खुदा फजल से मैं इस लायक हो गया हूॅं उसे बताऊंगा कि आज मैं क्या हूॅं और वह क्या है।"62 इसी तरह दंतकथा उपन्यास में आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग कुछ इस प्रकार से मिलता है- "मैं दौड़ रहा था। इधर से उधर से उधर से इधर। कभी इस गली में घुसता तो कभी उस गली में। मैं लगातार छिपने की कोशिश कर रहा था। कभी दो दीवारों के बीच में तो कभी किसी खाली खड़े रिक्शे के नीचे। पर कहीं कोई ऐसा ठाँव नहीं था जो मुझे बचा सकता। खदेड़ने वाला मुझसे कहीं ज्यादा चालाक था।"63

**3. संवादात्मक शैली-** कहानी या उपन्यास का कथानीयक विस्तार का दो पात्रों के मध्य होने वाले संवाद से होता है तब अभिव्यक्ति की इस शैली की संवाद शैली के नाम से जाना जाता है। संवादात्मक शैली में दो पात्रों के बीच किसी घटना भाव-विचार या स्थिति आदि के संदर्भ में संवाद होना अपरिहार्य होता है। बिस्मिल्लाह जी ने अपनी अनेक कहानियों और उपन्यासों में संवादात्मक शैली का प्रयोग किया है, जिसमें से 'समर शेष है' शीर्षक उपन्यास का निम्नलिखित अंश दर्शनीय है - "नहीं छाया, तुम डर रही हो । या शायद यहबात हो कि तुम विवाहित हो और तुम्हारे पति शायद मेरी अपेक्षा "

"बस कीजिए, अब बहुत बक चुके आप"।

"तब क्या बात है?"

"आप समझने की कोशिश कीजिए। यह कितना कठिन होगा। ऐसी जिद नहीं की जाती। बस जब तक यहाँ हूॅं, मैं आपकी हूँ। मेरा जो चाहे सो कीजिए।"64

**4. नाटकीय शैली-** कथा में कलात्मकता या चमत्कार उत्पन्न करने के उद्देश्य से कथाकारों के द्वारा अभिव्यक्ति में जो नाटकीयता उत्पन्न की जाती है, उसे नाटकीय अथवा नाट्य शैली के नाम से जाना जाता है। इस शैली का प्रयोग अधिकांशतःपात्रों की चारित्रिक प्रवृत्तियों के अंकन में ही किया जाता है। बिस्मिल्लाह जी की 'मादा सारस की काटर आँखे' शीर्षक कहानी के अधोलिखित अंश में नाट्य शैली का उत्कृष्ट प्रयोग दिखाई देता है-

"आप की तबियत नहीं ठीक है क्या? अभी आप चौक रहे थे, क्या बात है?

- कुछ नहीं। तबियत तो ठीक है। चाय नहीं पी जा रही है।

- तो मत पीजिए।

- पर इल्मी चाय खराब हो जायेगी।

- लाइए, मैं पी लूँ।

- पर यह तो जूठा हो गया है?

- तो क्या हुआ, आप क्यों डरते हैं?

- और लड़की ने उसके हाथ से गिलास ले लिया.........।"65

**5. पत्रात्मक शैली-** नाटक की तरह कहानी या उपन्यास विधा में आत्मगत या स्वागत कथनों का विधान नहीं होता है। ऐसे में उपन्यास या कहानी का पात्र जिन भावों-विचारों को स्वगत रूप में व्यक्त नहीं कर पाता है उन्हें कथाकार कथाओं में दूसरे पात्रों को लिखे गए पत्रों के माध्यम से व्यक्त करवाता। है । पात्र जब अपने भावो-विचारों आदि को पत्रों के माध्यम से विवेचित-विश्लेषित करता है तब इस शैली को पत्रात्मक शैली के नाम से जाना जाता है। वैसे तो बिस्मिल्लाह जी ने पात्रों के अंतर्मन की विवेचना करने वाली इस शैली का प्रयोग 'मुखड़ा क्या देखें' तथा 'शमर शेष है' नामक उपन्यासों में किया है परंतु उनका 'रावी लिखता है' शीर्षक उपन्यास आघंत पत्रात्मक शैली में ही लिखा गया है। इस उपन्यास में आदि से लेकर अंत तक कथा पात्रों के माध्यम से ही आगे बढ़ाई गयी है, एक उदाहरण द्रष्टव्य है- "तुम हो पत्र लिखोगे नहीं, मैं ही लिख दू। न जाने कैसे उस दिन आ ही गए थे। शायद किताबें न लेनी होती हो तो आते भी नहीं। शेष किताबें भी अब तुम ले ही जाओं। क्योंकि अब मेरी उपयोगिता ही क्या रह गई है? अब तो देखभाल करने वाला भी कोई मौजूद हैं वहा- अब कुछ लिखा नहीं जा रहा है......बस.....अपनी सेहत का ध्यान रखना तुम्हारी 'तुम'।"66

**6. लोककथात्मक शैली-** इस शैली का प्रयोग कहानियों की अपेक्षा उपन्यासों में अधिक होता है जिसका कारण उपन्यासों की स्वरुपगत और संरचनात्मक व्यापकता होती है। इस शैली का प्रयोग उपन्यास में वर्णित परस्पर असम्बंध सूत्रों में सम्बद्धता दिखाने के लिए किया

जाता है। लोककथात्मक शैली का आधार आंचलिक जीवन में प्रचलित कथाएँ होती है तथा उनके प्रयोग से कहानी परम्परा से जुड़ जाती है। बिस्मिल्लाह जी के 'माता मिला की कहानी' शीर्षक कहानी में लोककथात्मक शैली का उत्कृष्ट स्वरूप दिखाई देता है- "एक था माता, एक था मिरला। दोनों बहुत गरीब थे और दोनों मौसेरे भाई थे। उस जमाने में चोर-चोर मौसेरे भाई नहीं हुआ करते थे। बल्कि गरीब-गरीब मौसेरे भाई होते थे। वे बनिया थे। मगर खरीदने और बेचने को उनके पास कुछ नहीं था। मात मिरवा जिस राज्य में रहते थे वह बहुत बड़ा था। वहा का राजा भी बहुत बड़ा था। वहाँ हर चीज बड़ी थी।"67

**7. फ्लैश बैक शैली-** इसे स्मृति परक या पूर्व दीप्ति शैली के नाम से भी जाना जाता है। इस शैली के माध्यम से पात्र पहले घटित हो चुकी घटनाओं को व्यक्त करते हुए उन्हें वर्तमान जीवन-स्थितियों से जोड़ता है। वैसे तो बिस्मिल्लाह जी ने अपने अनेक उपन्यासों और कहानियों में क्लैश बैक या पूर्व दीप्ति शैली का प्रयोग किया है, लेकिन उनका 'दंतकथा' नामक उपन्यास आघंत इसी शैली में लिखा गया है। उपन्यास का कथानायक 'मुर्गा' हत्या की आशंका से नाबदान में घुस जाता है। नाबदान का वातावरण देखकर उसे अपने पिछले जन्म की कहानी याद आ जाती है जिसने उसे एक अंग्रेजी मुर्गी से प्रेम था लेकिन उसे अपनी प्रेमिका से मिलने नहीं दिया गया। फ्लैश बैक शैली में यह घटना अग्रलिखित प्रकार से वर्णित की गयी है- "हमारे उस शहरी दरबे में दोनो तरह के मुर्गे थे और दोनों तरह की मुर्गिया। कुछ दिनों तक वहाँ एक अंग्रेजी किस्म की मुर्गी से अपनापा भी रहा था। वह अभी हल्की नहीं हुई थी और उसके बदन में अब भी गर्माई भरी हुई थी। उसके तन से जब मेरा तन टकराता तो एक अजीब सी हलचल मेरे भीतर पैदा हो जाती। लेकिन जल्दी ही वह मुझसे दूर छिटक जाती। घर की स्त्रियॉ भी उसे दूर कर देती।"68

**8. मनोविश्लेषणात्मक शैली-** इस शैली में मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों एवं पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। किसी भी घटना भाव-विचार परिस्थिति आदि का वर्णन-विवेचन मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो के अनुरूप करना ही मनोविश्लेषणात्मक शैली कहलाती है। इस शैली में तार्किकता एवं मानसिक विवेचना की ही प्रधानता रहती है। वैसे तो मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग मनोवैज्ञानिक कहानियों और उपन्यासों में ही किया जाता है लेकिन साहित्यिक सिद्धांतो एवं मानदण्डों में प्रवीण सर्जक सामाजिक कोटि की रचनाओं में भी इस शैली का प्रयोग करने में सफल हो जाते हैं। बिस्मिल्लाह जी ने अपने कथा-साहित्य में इस शैली का प्रयोग अनेक स्थलों पर दिया है। 'समर शेष है' उपन्यास का अग्रलिखित अंश उत्तम कोटि की मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग दर्शाता है- "यह था मेरी जिन्दगी का हिस्सा, जिसमें मैं सही अर्थों में पूरी तरह अकेला था। यह वह क्षण था जबकि सारी दुनिया मुझसे अलग हो गयी थी और मैं किसी लम्बे-चौड़े पठार में खड़े एकाकी वृक्ष की भांति अपने अस्तित्व को पारिभाषित करने की कोशिश कर रहा था। मेरी स्थिति उस टापू के समान हो गयी थी, जिसके चारों ओर जल सूख गया हो और जिसकी पीठ पर उगी घास को जंगल के बेरहम जानवार रात में आकर चर गए हों।"69 इसी तरह से 'जीना हो पड़ेगा' शीर्षक कहानी का यह अंश भी मनोविश्लेषणात्मक शैली के प्रयोग का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण कहा जा सकता है- "इसमें मैं उन सब लोगों को दस्तखत कर रहा है जो मुझे एक ईमानदार आदमी मानते हैं। मैं बेकसूर हूँ। मुझे बिना किसी वजह के काम पर से हटाया गया है। जब मेरे फेवर में बहोत सारे दरख़्त हो जाएंगे तब मैं इस कॉपी को प्रधानमंत्रीजी के पास भेजूगा, फिर मुझे उम्मीद है कि प्रधानमंत्री जी मेरे हाकिमों को एक कड़ी चिट्ठी लिखेंगे और मुझे दुबारा मेरे काम पर बहाल कर दिया जाएगा।"70

इस तरह से स्पष्ट है कि बिस्मिल्लाह जी के कथा-साहित्य में पर्याप्त शैलीगत वैविध्य अंतर्भुक्त रहा है। उन्होंने अपनी कहानियों और उपन्यासों में कथा-साहित्य में प्रयुक्त होने वाली लगभग सभी शैलियों को व्यवहार में लाया है। इस शैलीगत वैविध्य के कारण ही

उनकी कथात्मक सर्जनाओं की अभिव्यक्तिपरक क्षमता में वृद्धि हुई है तथा इन्ही के कारण उसकी रचनाएँ विलक्षण सार्वकालिक उपादेयता तथा दीर्घकालिक प्रासंगिकता वाली बन सकी है।

**अध्याय पांच संदर्भ-सूची**


1. अब्दुल बिस्मिल्लाह का कथा साहित्य, डॉ० वसीम मक्रानी, पृष्ठ संख्या- 2

2. भाषा और संवेदना का विकास, डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ संख्या- 13

3. जहरबाद, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 21

4. वही, पृष्ठ संख्या- 34

5. वही, पृष्ठ संख्या- 59

6. वही, पृष्ठ संख्या- 60

7. कुठॉव, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 148

8. वही, पृष्ठ संख्या- 106

9. वही, पृष्ठ संख्या- 18

10. मुखड़ा क्या देखे, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 81

11. वही, पृष्ठ संख्या- 9

12. वही, पृष्ठ संख्या- 12

13. वही, पृष्ठ संख्या- 10

14. झीनी-झीनी बीनी चदरिया, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 127

15. वही, पृष्ठ संख्या- 98-99

16. रफ़-रफ़ मेल, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 34

17. वही, (जीवन) पृष्ठ संख्या- 92

18. वही, पृष्ठ संख्या- 110

19. शादी का जोकर(कैलेंडर), अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 58

20. झीनी-झीनी बीनी चदरिया, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 169

21. समर शेष है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 98

22. वही, पृष्ठ संख्या- 128

23. मुखड़ा क्या देखे, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 197

24. वही, पृष्ठ संख्या- 216

25. वही, पृष्ठ संख्या- 246

26. रावी लिखता है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 94

27. वही, पृष्ठ संख्या- 95

28. वही, पृष्ठ संख्या- 135

29. कुठॉव, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 105

30. वही, पृष्ठ संख्या- 104

31. वही, पृष्ठ संख्या- 106

32. रावी लिखता है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 139

33. वही, पृष्ठ संख्या- 79

34. वही, पृष्ठ संख्या- 40

35. अपवित्र आख्यान, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 68

36. वही, पृष्ठ संख्या- 108

37. झीनी-झीनी बीनी चदरिया, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 169

38. वही, पृष्ठ संख्या- 61

39. समर शेष है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 128

40. झीनी-झीनी बीनी चदरिया, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 169-170

41. रफ़-रफ़ मेल, (जीना तो पड़ेगा) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 15

42. वही (लगेगी), पृष्ठ संख्या- 36

43. वही (गोती), पृष्ठ संख्या- 46

44. वही (नींद जब आती नहीं), पृष्ठ संख्या- 103

45. जहरबाद, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 9-10

46. झीनी-झीनी बीनी चदरिया, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 109-110

47. कितने-कितने सवाल(तलाक के बाद) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 15

48. मुखड़ा क्या देखे, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 105

49. झीनी-झीनी बीनी चदरिया, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 69-70

50. समर शेष है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 118

51. मुखड़ा क्या देखे, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 46

52. कितने-कितने सवाल (खण्ड-खण्ड आदमी) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 78

53. मुखड़ा क्या देखे, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 162-163

54. कितने-कितने सवाल (तलाक के बाद) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 54

55. रफ़-रफ़ मेल, (रफ़ रफ़ मेल) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 56

56. समर शेष है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 37

57. मुखड़ा क्या देखे, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 90

58. दंतकथा, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 33

59. जहरबाद, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 100

60. मुखड़ा क्या देखे, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 14

61. रफ़-रफ़ मेल, (नायिका) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 56

62. अतिथि देवो भव (अभिनेता), अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 44

63. दंतकथा, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 7

64. समर शेष है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 93

65. जीनिया के फूल (मादा सारस की कातर आंखें) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 46

66. रावी लिखता है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 94

67. रफ़-रफ़ मेल, (माता मिरला की कहानी) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 124

68. दंतकथा, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 48

69. समर शेष है, अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 141-142

70. रफ़-रफ़ मेल, (जीना तो पड़ेगा) अब्दुल बिस्मिल्लाह, पृष्ठ संख्या- 10

## उपसंहार

हिन्दी साहित्य-संसार रूपी नक्षत्राकाश के समसामयिक परिदृश्य को अपनी संख्यातीत विधीय महत्व की सर्जनाओं द्वारा प्रदीप्त करने वाले ख्यातिलब्ध कथाकार अब्दुल बिस्मिल्लाह बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी रहे हैं। अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रज्ञाजन्य नैसर्गिक प्रतिभा एवं उत्कृष्ट सृजनशीलता के माध्यम से समकालीन साहित्यरुपी उपवन को इन्होंने विभिन्न विधाओं में की गयी रचनाओं रूपी लता-प्रतानो से सुगंधित बनाए रखा है। इनके व्यक्तित्व में अंतर्भुक्त इन अनन्य प्रवृत्तियों में इनकी अंतर्वृत्तियों के साथ-साथ देशकाल और वातावरण की परिस्थितियों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। कवि, कथाकार, नाटककार एवं विमर्शकार का एक साथ अभिधान धारण करने वाले बिस्मिल्लाह जी के व्यक्तित्त्व